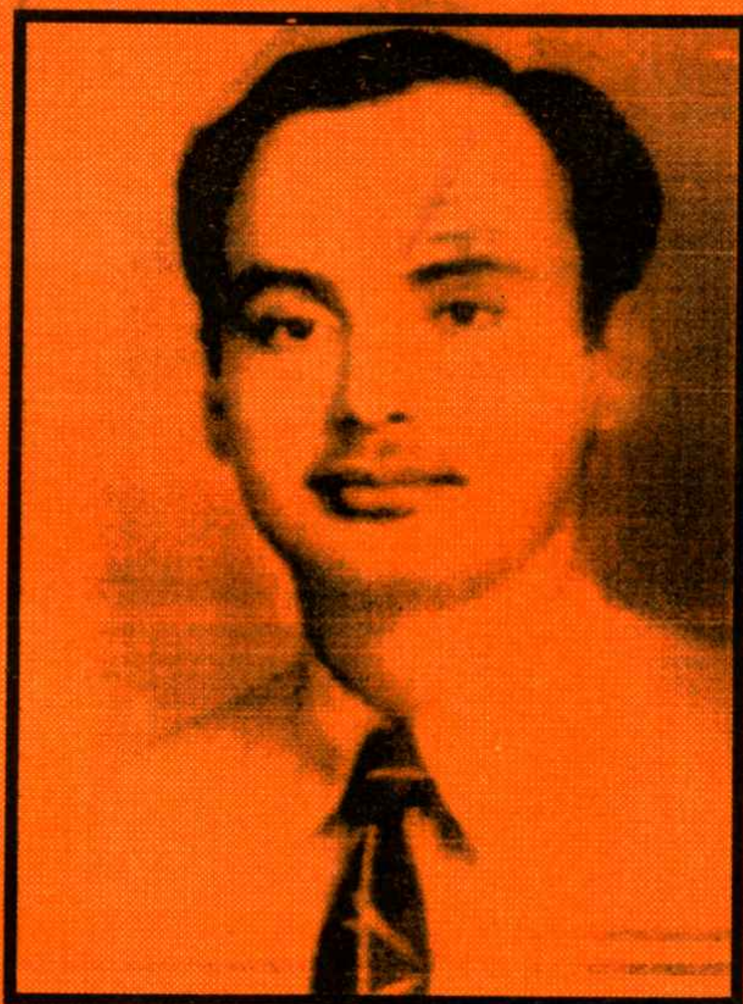
सूक्तिपञ्चामृतम्

सूक्तिपञ्चामृतं काव्यं मिश्रसम्पूर्णनिर्मितम् ।
शक्तिं सञ्चारयेत्सत्सु कलिकालाहतेष्वपि।।



प्रणेता –

कविपूण्डरीकः

सम्पूर्ण दत्त मिश्रः

ह्रीं



श्रीगणेशाम्बिकागुरुभ्यो नमः
श्रीकुलदेवताभ्यो नमः
ऊँ नमः शिवाय





सम्पूर्णदत्तमिश्रोऽहं सूक्ति-पञ्चामृतं मम ।
धवलाचल-सुन्दर्यै कुलदेव्यै समर्पये ।।

-कविपुण्डरीकः
सम्पूर्ण दत्त मिश्रः

नाम---

पत्र व्यवहार संकेत---------------------------



सूक्तिपञ्चामृतम्

हिन्दी-इँग्लिश-भाषाओं में
कविपुण्डरीक-कृत-पद्यानुवाद-सहित

प्रणेता-
कविपुण्डरीकः
सम्पूर्ण दत्त मिश्र

उल्लासश्रीभवनम्
गोपालगढ़, भरतपुर, राजस्थान
३२१००१

प्रकाशक -
कविपुण्डरीकः
सम्पूर्ण दत्त मिश्र

प्रकाशनकाल -
विक्रमसंवत् २०५६, मार्गशीर्ष वदि श्री कालभैरवाष्टमी
मंगलवार

तीस नवम्बर १९९९ ई०

प्रथम संस्करण
५००

दक्षिणा -
दो सौ रुपये + पोस्टेज
सात ब्रिटिश पौण्ड + पोस्टेज
दस अमरीकन डालर + पोस्टेज

प्रकाशक -
कविपुण्डरीकः
सम्पूर्ण दत्त मिश्र

पुस्तक प्राप्ति स्थान -
उल्लासश्रीभवनम्
गोपालगढ़, भरतपुर, राजस्थान
३२१००१

कम्प्यूटर-प्रयोग-कर्ता
अजय वाशिष्ठ
पी. सी. टैक्नीक्स
डी-106, रणजीत नगर, भरतपुर

मुद्रक -

THE SŪKTI-PAÑCĀMṚTAM

With the translations in verse-form in both Hindi and English by the poet himself

The author :-
Kavi- Puṇḍarīkaḥ
SAMPŪRṆA DATTA MIÇRA
Ullāsaçrī- Bhavanam
Gopal Gadh, Bharatpur, Rajasthan
321001

The Publisher
Kavi-Puṇḍarīkaḥ
SAMPŪRṆA DATTA MIÇRA

Published on
Saṁvat 2056 Mārgaçīrṣa vadi çrī kālabhairavāṣṭamī
November 30, 1999

First edition
500

Price
Rs. Two hundred + Postage
Seven Pounds + Postage
Ten Dollars + Postage

The author :-
Kavi- Puṇḍarīkaḥ
SAMPŪRṆA DATTA MIÇRA

The book available at :
Ullāsaçrī- Bhavanam
Gopal Gadh, Bharatpur, Rajasthan
321001

The Publisher
Kavi-Puṇḍarīkaḥ
SAMPŪRṆA DATTA MIÇRA

COMPUTERIZED BY
AJAY VASHISHTHA
P. C. TECHNIQUE`S
D-106,RANJEET NAGAR, BHARATPUR

PRINTED BY

अनुक्रमण-दर्शनी

क्रमाङ्कः पृष्ठाङ्कः

The Table of Contents

श्री श्री जगद्गुरु शङ्कराचार्य महासंस्थानम्, दक्षिणाम्नाय श्री शारदापीठम्, शृङ्गेरी

PRIVATE SECRETARY
To His Holiness Sri Jagadguru
Shankaracharya, Dakshinamnaya
SRI SHARADA PEETHAM,
SRINGERI -577139 (Karnataka).



Ref. No. DO1-180
Camp शृङ्गगिरिः
Date १७.८.९९

सुन्दरीकरुणापात्र त्रिभाषाकविताचण ।
सम्पूर्णदत्तमिश्राख्यसुकवे ते नमोस्त्विदम् ।।
सूक्तिपञ्चामृताभिख्यं काव्यं त्वद्रचितं कवे ।
समार्पयाम सम्प्राप्य जगद्गुरुपदाब्जयोः ।।
तदवेक्ष्य गुरूत्तंसाः करुणावरुणालयाः ।
मोदमाविरकार्षुः स्वं शिवानुध्यानतत्पराः ।।
बाला युवानः स्थविरा नार्यो नेतार आस्तिकाः ।
सर्वेपि काव्यमेतद्धि दृष्ट्वा स्युः प्रीतमानसाः ।।
आशास्य च भवच्छ्रेयः जगदाचार्यसत्तमाः ।
शारदाकुंकुमं मन्त्राक्षतांश्च व्यतरन्मुदा ।।

इत्थम्

Sd. /

(डॉ० एन्. एस. दक्षिणामूर्तिः)

Enc. - (1) Prasadams

(2) Vyasakshatas(S)

श्री चन्द्रमौलीश्वराय नमः।। दूरवाणी 2315

श्री शङ्करभगवत्पादाचार्य परम्पराऽऽगत- Ⓟ

श्री का‍ञ्ची-कामकोटि-पीठाधिपति-

जगद्गुरु-श्री शङ्कराचार्य-स्वामिनाम्

श्री मठम् संस्थानम्

का‍ञ्चीपुरम् ।।

यात्रा स्थानम् (मुद्राङ्क) दिनाङ्कः १८-४-६३

श्री सम्पूर्ण दत्त मिश्र

भरतपुर

नमस्ते ।

भवतां पत्राणि सर्वाणि प्राप्तानि ।

आस्वादितसूक्तिप‍ञ्चामृतैः श्रीपादैः भवदर्थे प्रसादः अनुगृहीतः । स च अनेन प्रेषितोऽस्ति ।

विषयमिमं विज्ञापयन्

Sd. / Illegible

सूचना :- स्वामी जी को हिन्दी-ईंग्लिश-पद्यानुवाद-हीन केवल संस्कृत मूल भेजा गया था।

– सम्पूर्ण दत्त मिश्र



श्रीगुरुगणेशः

राष्ट्रपतिसम्मानित
महामहोपाध्याय-
प्रो. बटुकनाथ शास्त्री खिस्ते
अध्यक्ष- काशीपण्डितसभा वाराणसी

'श्रीनिकेतम्,' एन् १६/४३, पत्रकार नगर,
विनायका, वाराणसी-२२१०१०

श्रीमता कविपुण्डरीकमहाभागेन-निरर्गलप्रतिभासिद्धेन ग्रथितं 'सूक्तिपञ्चामृतम्' नाम काव्यरत्नं समासाद्य समास्वाद्य च भृशं प्रसीदामि । इतः पूर्वमपि 'रेवेश्वररञ्जना' प्रभृतीनि काव्यानि कवेरस्य गौरवं पुष्णन्ति । अस्मिन् 'सूक्ति पञ्चामृते' देवपूजाया दुग्धादिपञ्चामृतनामक्रमेण संज्ञां विरचयता कविना भक्तिप्राधान्यं प्रदर्शितम् । अस्यां रचनायां मुक्तक-काव्य-विधया सकलानि सूक्तानि पृथक्-पृथक् स्वतन्त्रं रुपम् आदधते । प्रसङ्गेन वीर-शान्त-करुण-श्रृङ्गरादीनां रसानाम् आस्वादः सहृदयग्राह्यः प्राप्यते। किञ्च कविरयं भाषात्रितयेऽपि सूक्तमिदं प्रणीय प्रदर्शयति वैदुष्यम् । प्रथमं संस्कृतभाषायां तदनु हिन्द्यां ततश्चांग्लभाषायां समानरूपेण विरचनां कृत्वा तिसृष्वपि भाषासु निरर्गलं रचनासामर्थ्यं प्रकाशयति ।

अद्य यावद्या रचनाः प्रकाशिताः तावताऽस्य सर्वतोदिक्कं वैदुष्यं काव्यरचनाचातुर्यञ्च भृशं निष्पक्ष-पातान् प्रमोदयिष्यति सारस्वतसेवकान् इत्याशासे।

अहमस्य सुकवेः मदीयसुहृदः सर्वलोकश्लाध्यं दिङ्मूलकूलङ्कषं कुन्देन्दुधवलं यशः श्रीजगदम्बिकायाः चरणाम्भोजयोः मुहुः प्रार्थये ।

बटुकनाथ शास्त्री खिस्ते

Nowadays we do not have many people who write in Sanskrit. Therefore it is a pleasure to know that you have written these two works which you have sent me. I hope you will have a successful career as a literary writer.

NEW DELHI December 16,1959. Sd. / **S. Radhakrishnan**

I have now been able to go through the verses of Shri Sampurna Datta Mishra. I have been greatly impressed both by his command over the language and by his poetic gifts. I return the manuscript herewith.

PATNA Ferbrary 22, 1954 Sd. / **Amaranatha Jha**

I have read with pleasure the "Ritu ullasa" by Pandit Sampurna Datta Mishra in manuscript. It comprises... verses composed in easy style after the famous "Ritu Samhara" ascribed by some to the great poet Kalidasa.

Misra`s attempt is laudable and deserves appreciation.

ALLAHABAD
4.3.1954

P.K. Acharya
Mahamahopadhyaya
I.E.S. (Rtd) B.A. HONS, M.A., PHD, D.LIT., LONDON

I had the occasion to peruse "Ritoollas" composed by Pt. Mishra. The poems show the author`s unwearied pursuit of learning. The author has ably described the break of rains in a mellifluous voice. The poet of love has sublimated himself into a poet of truth. He has tried to translate the natural beauties of the seasons to realities. The peoms have thrown full glare on the natural beauties of the seasons. The Savant writer has a clear vision born of dispassionate outlook.

In these days, when Sanskrit studies are so much languishing, the author has achieved great ends and deserves every commendation for composing these poems.

A. Bhattacharya
6.3.54
Ist Addl. Sessions Judge
Allahabad

JAIPUR
February 11, 1955.

It gave me a great pleasure to listen to the "Ritullas" of Pt. Sampurna Datta Mishra, recited by himself. .... When the verses were being recited to me I was reminded of Kalidas` "Ritu Samhar". The budding poet is a keen observer of nature and has a command over Sanskrit language. Pt. Mishra is gifted with genius and can compose with ease and fluency which are not easy to find. .... I am sure "Saraswati" will shower her choicest blessings upon Pt. Mishra.

R.V. KUMBHARE
M.A. B.T. T.D. (LONDON)

श्री सम्पूर्ण दत्त मिश्र के ऋतूल्लास नामक संस्कृत काव्य पर कविभूषण-साहित्यमहोपाध्याय-आशुकवि-वेदान्तभूषण-आगमरत्न-आम्नाय-धुरन्धर-महोपदेशक-कविकाव्यरत्नाकर-पण्डितप्रवर श्रीहरिशास्त्री दाधीच जयपुरस्थ द्वारा लिखित भूमिका का अंश:-

श्रीमान् महान् विद्वान् राजर्षि भर्तृहरि ने क्या ही सुन्दर कहा है -

"जयन्ति ते सुकृतिनो रससिद्धाः कवीश्वराः ।
नास्ति येषां यशः काये जरामरणजं भयम् ।।"

कवि का काव्य यशरूप अविनश्वर शरीर प्रकट करता है और वह काव्य ही जन्यजनक भाव से कवि का शरीर कहलाता है। इस शरीर में कभी जरा (बुढ़ापा) और मृत्यु का भय नहीं होता । ऐसे काव्य शरीर प्रादुर्भूत करने वाले कवि पूर्वजन्म के ऋषि होते हैं जैसा कि व्यास भगवान् की इस सूक्ति से सुस्पष्ट होता है-

'नानृषिः कुरुते काव्यम्'

जो पूर्वजन्म में ऋषि (ज्ञानी) होता है वह जन्मान्तर में विद्वान् होकर कवि होता है।

× × ×

कवि की कृति में सहृदयता और अभिनवरोचकता भरी पड़ी है, समय-समय पर उपयुक्त होती जायेगी तो बडा लाभ होगा । प्रसाद गुण है और रचना सरस एवं सरल है। साथ-साथ हिन्दी अनुवाद भी कसौटी पर कसा हुआ सा प्रतीत हुआ है। भाषा बहुत ही व्यावहारिक है, सबको ही पसन्द आवेगी।

कवि ने पद्यों का इंग्रेजी अनुवाद भी कर दिया है। इससे इंग्रेजी के विद्वानों को भी इस संस्कृत साहित्य के वर्णन के तरीको का अनुभव होगा, वे भी इसे पढकर प्रसन्न होंगे।

श्रीहरि शास्त्री दाधीच
जयपुर ।

१०-६-५५ ई०

श्री सम्पूर्ण दत्त मिश्र की हिन्दी 'प्रावृट्-पृषन्ति' की भूमिका से उद्धृत अंश:-

"तुम्हारी वाणी में सम्पूर्ण
विश्ववीणा की व्याकुल तान ।"

× × ×

प्रस्तुत कविता संग्रह मूलत: उस समय का है तब श्री मिश्र लगभग बाईस वर्ष के थे- बल्कि संग्रह की कुछ कविताएँ तो उसके भी पहले की हैं। हाँ, प्रकाशन के वक्त उन्होंने अनुभव के आधार पर उनमें जगह-जगह परिवर्धन कर दिये हैं।

इन कविताओं का पठन करने पर पाठक स्वयं अनुभव करेंगे कि ये सभी गीत काव्य के अनूठे उदाहरण हैं। उनकी पद्यावली ललित एवं कोमल है तथा उनकी कविता में जहाँ ओज है वहाँ प्रसाद भी। रस और भाव दोनों की पकड़ रखने वाले कवि के लिये ये दोनों ही आवश्यक हैं-

"नैकमोज: प्रसादो वा रसभावविद: कवे:।।"

वैसे इन कविताओं का मूल सम्पूर्ण दत्त जी के यौवन की कृतियों का अंग है परन्तु अनुभव के फलस्वरूप उनमें परिवर्तन करके कविपुण्डरीक ने उन्हें परिपक्वता और गहराई प्रदान कर दी है।

एक बात और। पण्डित जी संस्कृत के जाने माने विद्वान् और कवि हैं; फिर भी हिन्दी से उन्हें विशेष प्रेम है और यही कारण है कि हिन्दी में लिखी इन कविताओं को तीन दशकों से अधिक समय तक सँजो कर ही नहीं रखा बल्कि उन्हें अब और सजा और सँवार कर प्रकाशन के लिए प्रस्तुत किया है। वैसे वे कहते है-

"सुरबालाओं की संगति से
संस्कृत संवादी स्वर मेरा ।
उसको सामान्य समागम के
कैसे अनुकूल बनाऊँ मैं ?"

× × ×

गुरुवार
विजयादशमी २०४१ विक्रमाब्द
४ अक्टूबर १९८४ ई0

रमाप्रसन्न नायक
(ICS राज्यसेवा निवृत)

भूतपूर्व मुख्य सचिव, मध्य प्रदेश सरकार, भोपाल ।
भूतपूर्व राजभाषा-सचिव, गृहमंत्रालय, भारत-सरकार, नई दिल्ली।
भूतपूर्व कुलपति, जबलपुर विश्वविद्यालय, जबलपुर, मध्यप्रदेश ।

UNIVERSITY GRANTS COMMISSION
OLD MILL ROAD
NEW DELHI - 2

Camp : Madras.

15th July, 1959

Dear Shri Mishra,

Thank you for sending me a copy of your book "Sukti Pancamrtam". I have read the Sanskrit verses with appreciation of its originality and style.

Yours sincerely,

Sd. / C.D. Deshmukh

Shri S.D. Mishra,
Ulhas Sribhavan,
Mohalla Gopalgarh,
BHARATPUR,
RAJASTHAN

Grams : UNIGRANTS

UNIVERSITY GRANTS COMMISSION
OLD MILL ROAD
NEW DELHI - 2

2nd November 1959

Dear Shri Mishra,

Thank you for sending me a copy of "Ritullas". I read it with interest and appreciation of your ability to write Sanskrit verse.

With good wishes,

Yours sincerely

Sd. / C. D. DESHMUKH

Shri S. D. Mishra,

Department of English
The University
BRISTOL

20 April, 1984

Dear Mr. Datta Mishra,

Thank you for your letter.................

Certainly the stanzas translated from your Sanskrit song, which you sent me, have a rhythm which is familiar to my ear....................................

Your verses go very smoothly. I hope that the original was a success when you performed it at Jaipur.

With best wishes,

Yours sincerely

JOHN BURROW

श्रीः ।

स्वल्पाकारमपि प्रसादमधुरं काव्यं सुधावर्षणं
निर्मायैतदनाविलं खलु ऋतूल्लासाऽभिधानं कविः ।
विश्वेषां कविताकृतां सुमनसां चेतांसि संप्रीणयन्
लब्ध्वाऽयं कविपुण्डरीक-पदवीं जीयात्सतां संसदि ।।

मिश्रश्रीसम्पूर्णदत्तप्रणीतं सहृदयहृदयाकर्षणरमणीयपदार्थाभरणं ऋतुवर्णनपरं ऋतूल्लासाऽभिधानं लघुशरीरमपि बृहृदर्थगर्भमन्वर्थं काव्यं पठित्वा परममुल्लासमवापाऽस्माकं हृदयम् ।

विरला एवं नन्विदानीं गीर्वाणवाणीचरणपरिचरण-परायणान्तःकरणाः कवयो विबुधा अपि । ईदृशेऽपि समये एतत्कवियुवकसदृक्षा विरलविरलाः प्रतिभामण्डिता निजनवनवरचनाभिः सुरभारतीसेवायै बद्धपरिकरा इति भारतीयानां कृते महद्धषस्पिदम् । यत्सत्यं कृतिरियं कर्णाभ्यर्णं कृता पीयूषपूरमुद्गिरतीव । किमधिकेन लेखनेन कवयो रसिकाः सहृदयाः स्वयमेव पठित्वा काव्यमिदं साक्षिणो भवेयुरिति ।

अमृतवाग्भवाचार्यः
पौषकृष्णा ६ शनौ
संवत् २०११

शुभाशंसा /पुरोवाक्

राजस्थान के सुप्रथित कवि, 'ऋतूल्लास' और 'सूक्तिपञ्चामृत' आदि काव्यों के रचयिता कविकोकिल पं० सम्पूर्णदत्त मिश्र 'कविपुण्डरीक' की नवीनतम कृति 'रासनायकनायिकम्' प्रकाश में आ रही है यह अत्यन्त हर्ष का विषय है । इस काव्य में पंचचामर छन्द सुललित, हृदयावर्जक छटा के साथ महारास के नायक श्रीकृष्ण और नायिका श्री राधा की जो वन्दना निबद्ध है वह कवि के सुपरिचित अन्दाज में शब्द और अर्थ के विपुल चमत्कार को समाहित किये हुए है। इस संस्कृत काव्य के साथ कवि का स्वोपज्ञ हिन्दी काव्यानुवाद (कुछ का समच्छन्दोऽनुवाद) तथा अंग्रेजी काव्यानुवाद भी है जो इसकी उपादेयता में वृद्धि करेगा यह निर्विवाद है । कवि द्वारा स्वयं किया हुआ यह हिन्दी समच्छन्दोऽनुवाद (अनेक पद्यों का, कुछ पद्यों का हिन्दी छन्दों में अनुवाद है) तथा अंग्रेजी अनुवाद, हिन्दी तथा अंग्रेजी भाषा पर कवि के अधिकार तथा काव्य प्रणयन क्षमता का प्रमाण भी है । 'कदा करिष्यसीह मां कृपाकटाक्षभाजनम्' के चतुर्थ चरण से समाप्त होने वाले पद्यों की शृंखला इस क्षमता के एक नमूने के रूप में देखी जा सकती है (राधाकृपाकटाक्षः १-११)

मैं कविवर मिश्र जी से लम्बे समय से परिचित हूँ ।

युवावस्था की इनकी काव्य कृतियाँ मेरे पिता स्व0 भट्ट श्रीमथुरानाथ शास्त्री कवि-शिरोमणि ने भी देखी थीं । तभी से इनकी कविताएँ प्रकाशित होती रही हैं । उनका यह आयाम बहुतों को ज्ञान नहीं होगा कि ये भरतपुर के व्रज क्षेत्र में रहते हुए भी तांत्रिक साधना में दीक्षित हैं, भगवती ललिताम्बा त्रिपुरसुन्दरी के आराधक हैं ।

× × ×

ग्रन्थकार-कृतज्ञता

स्वामि-श्री-भारतीतीर्थ-कृतं मे यत्प्रशंसनम् ।
यच्च व्यक्तवती चन्द्रशेखरेन्द्र-सरस्वती ।।1।।

काशी-विद्वत्सभाऽध्यक्ष-श्रीमद्बटुक-शास्त्रिणा ।
मुक्तकण्ठेन गद्ये यत्कृतं मे ग्रन्थ-वन्दनम् ।।2।।

पण्डित-श्री-कलानाथ-शास्त्रिणा भूमिकाद्वयम् ।
हिन्द्यामाङ्गल-भाषायां कृतं सौहार्द-सम्भृतम् ।।3।।

तत्समस्तानुकम्पार्थं काशयेऽहं कृतज्ञताम् ।
यतो मात्सर्य-संसारे प्रशंसाऽप्यतिदुर्लभा ।।4।।

श्रीमत्त्रिपुरसुन्दर्या वाममार्गेण पूजकः ।
तान्त्रिकः श्रीहरिः शास्त्री दाधीचो नाद्य विद्यते ।।5।।

ऋतूल्लासस्य काव्यस्य सूक्तिपञ्चामृतस्य च ।
भूमिकार्थं कृतज्ञत्वं कुर्वे श्रीहरि-पादयोः ।।6।।

का सत्ता मे वराकस्य कर्मणां करणे क्षमा ?
श्रीसुन्दर्या विलासोऽयं नाहन्ता भिद्यते ततः ।।7।।

-कविपुण्डरीकः

सम्पूर्ण-दत्त-मिश्रः

शाम्भवी मुद्रा में

सुन्दरीस्पन्दनन्दन:, कविकुञ्जर:, कवीश्वर:, कविकोकिल:, कविसहृदयशिखामणि:, कविकुलमणि:, कविपुण्डरीक:

पण्डित श्री सम्पूर्ण दत्त मिश्र

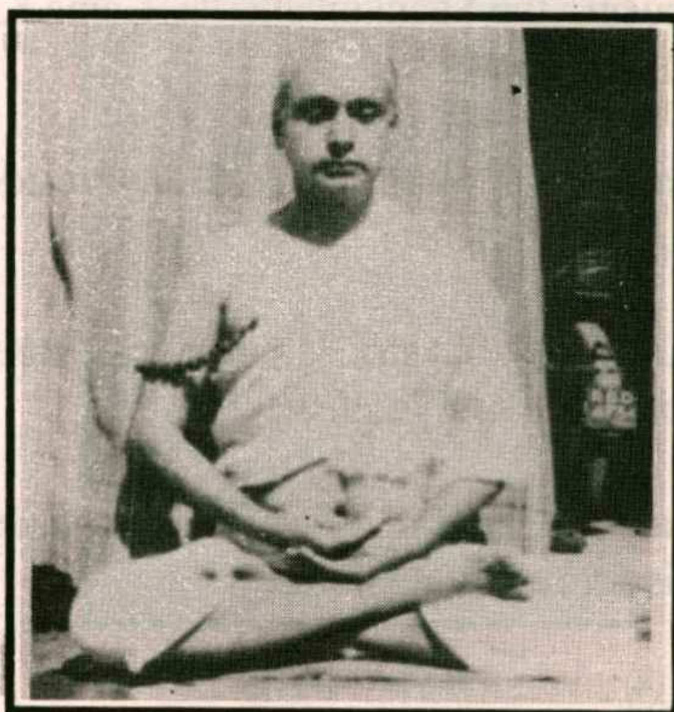
SAMPŪRṆA DATTA MIÇRA

In Çāmbhavī Mudrā

(A special pose of Yoga for tantrikas)

मिति संवत् २०४१ वैशाख वदि अष्टमी सोमवार

April 23, 1984.



आत्म-परिचय:

स्वर्गादेवाऽवतीर्ण: पुनरपि धरणे: स्वेच्छया स्वर्ग-गन्ता
य: सुन्दर्या: प्रसादादधिगत-कविता-कामिनी-प्रीतिमत्त:।
सोऽहं भोगाऽभिषिक्तो भरतपुर-गत: सप्त-पुत्रो गृहस्थो
देवर्षि-ब्रह्मविद्रो-चरण-शरणगो मिश्र-सम्पूर्णदत्त:।।1।।

-कविपुण्डरीक:

The Author's Gratitude

My thanks to those that are described below,
For compliments at my poetic show :

1. His Holiness Sri Jagadguru Shankaracharya, Dakshinamnaya Shri Sharada Peetham, Sringeri (Karnataka).

2. His Holiness the late Swami Chandra Shekharendra Saraswati, the Shankaracharya, Kama Koti Peeth, Kanchi .

3. Pt. Batuk Nath Shastri Khiste, the President, Pandit-Sabha, Kashi .

4. Dr. Kala Nath Shastri, Jaipur, for his forewords both in Hindi and English.

5. The late Pt. ShriHari Shastri Dadhicha, Jaipur, for his foreword in Hindi.

Thanks.

- Kavi-Puṇḍarīkaḥ
SAMPŪRṆA DATTA MIÇRA

सुन्दरीस्पन्दनन्दनः, कविकुञ्जरः, कवीश्वरः, कविकोकिलः,
कविसहृदयशिखामणिः, कविकुलमणिः,
कविपुण्डरीकः

पण्डित श्री सम्पूर्ण दत्त मिश्र

Kavi-Puṇḍarīkaḥ

SAMPŪRṆA DATTA MIÇRA

मिति संवत् २०१६ वैशाख सुदि अक्षय-तृतीया रविवार

May 10, 1959.



आत्म-परिचयः

स्वर्गादिवाऽवतीर्णः पुनरपि धरणेः स्वेच्छया स्वर्ग-गन्ता
यः सुन्दर्याः प्रसादादधिगत-कविता-कामिनी-प्रीतिमत्तः।
सोऽहं भोगाऽभिषिक्तो भरतपुर-गतः सप्त-पुत्रो गृहस्थो
देवर्षि-ब्रह्मविद्वो-चरण-शरणगो मिश्र-सम्पूर्णदत्तः।।1।।

-कविपुण्डरीकः

सूक्तिपञ्चामृतम्

उच्चैर्लोके विलसति ऋतूल्लास-नाम्ना प्रसिद्धे
काव्ये भूयस्तदपरमिदं सूक्तिपञ्चामृतं च ।
सत्सौभाग्यं स्वमधिवसतामेकरम्यं समृद्ध्या
उल्लासश्रीभवनमधुनैतत्प्रकाशीकरोति ।।

कविपुण्डरीकः

श्री सम्पूर्ण दत्त मिश्रः

उल्लासश्रीभवनम्

गोपालगढ़

भरतपुर

३२१००१

राजस्थान

भूमिका

लेखकः - कविभूषण-साहित्यमहोपाध्याय-आशुकवि-वेदान्तभूषण - आगमरत्न - आम्नायधुरन्धर - महोपदेशक - कविकाव्यरत्नाकर - पण्डितप्रवर-श्रीहरिशास्त्री दाधीचः जयपुरस्थः ।

आज हमने भरतपुर निवासी कविपुण्डरीक पण्डित सम्पूर्णदत्त मिश्र लिखित सूक्तिपञ्चामृत नाम का एक छोटा सा पुस्तक प्रकीर्ण पद्यों से सन्दृब्ध हुआ देखा । इसे दो-तीन बार पढ़ा । रचना सुन्दर हुई है । भाषा शैली सुगम है । अर्थ सुबोध है । भाव सभी औचित्य-भरित और गंभीर हैं । प्रसाद, वर्णों तथा पदों में, विशद है । कविता क्लिष्ट नहीं है, समास प्रचुर भी नहीं है । तत्तत्प्रकरण को समझ लें तो तत्तत्पद्य स्वादिष्ठ ही प्रतीत होते हैं ।

पुस्तक का नामकरण भी बड़ी समझ से किया है । सभी प्राचीन अर्वाचीन कविपुङ्गवों ने सूक्ति में (कविता में) सुधा का सन्निवेश तो किया ही है । तदनुसार सूक्ति में अमृतारोप यथार्थ है । तदुपरिष्टात् विशेषता देखिए पञ्चामृत शब्द के सहयोग की । संसार में पञ्चामृत प्रसिद्ध है । दूध, दही, घृत,

मधु और शर्करा इन पाँचों पदार्थों को अमृत माना है । गुण में भी ये पदार्थ सम्मिलित रूप में होते हैं तब इन्हें पञ्चामृत कहा है । इनके सम्मिश्रण में भी विशेष आस्वाद मिलता है । हमारे देव प्रतिमाओं को यह पञ्चामृत नैवेद्य में और पृथक्- पृथक् रूप में स्नान कराने में भी उपयुक्त होता है ।ऐसे उत्तम देवप्रिय पदार्थ पञ्चामृत का सूक्ति पर आरोप भावनामात्र से भी कितना मधुर विदित होता है, जरा अनुभव कर सविमर्ष सहृदयता से देखिए । कवि का इसमें युक्त ही प्रतिभा का उपयोग हुआ है, नई सूझ ही है ।सूक्तियों को उन दुग्धादि पाँचों पदार्थों के अनुसार ही विभक्त करने से समष्टिरूप में पञ्चामृत नाम यथार्थ गुणानुबन्धी हो गया है । कुछ सूक्तियों को दुग्धामृत और कुछ सुभाषितियों को दध्यमृत एवं कतिपय भणितियों को घृतामृत तथा कई पद्यों को मध्वमृत एवं कुछ वृत्तावलि को सितामृत नाम से प्रकाशित किया है।

पूर्वोक्त पाँचों अमृतों की एकरूपता के समान सन्दर्भ को एक ही नाम से प्रकाशित किया है ।

पाठक महानुभाव ! आप इस पञ्चामृत के भिन्न अमृतों का भिन्न-भिन्न आस्वाद अनुभव कर सकते हैं परन्तु उक्त पञ्चामृत को बनाये सम्मिश्रित किए पीछे भिन्न-भिन्न आस्वादानुभव नहीं कर सकते हैं । यह इसमें विशेषता है ।

हमने पढ़कर देखा है - वास्तव में कई सूक्तियाँ अर्थविशदता से दुग्ध-मधुर ही प्रतीत होती है तो कुछ सूक्तियाँ दधि सी समुज्ज्वल और गम्भीर भावपूर्ण हैं । कुछ घृत सी मसृण और अनेक मिठासपूर्ण मधु सी हैं । इस नाम का समन्वय देख कर हम तो बहुत प्रसन्न हुए हैं ।घृतामृत की एक सूक्ति को देखिए इसमें घृत जैसा आयु:प्रद और मध ुर तथा बलवत् है वैसा ही सूक्ति का प्रदर्शन भावादि से कितना उज्ज्वल और प्रबल तथा पुरुषार्थ-प्रवृत्ति के लिए कितना उत्तेजक है -

"नैष्कर्म्यं नो सुभग! भज सा साहसाऽऽप्या समृद्धिः
कातर्येणोन्मथितमतिकैः कैरवाप्ता वराकैः ?
वीरप्राप्या यदि सुखकरा वाञ्छिताः सन्ति भोगा
उत्साहानां विचर सरणौ भाग्यचर्चां निकृत्य ।।5।।"

दैववश निष्कर्म (निठल्ले) बैठे रहने वाले इस सूक्ति-घृत को पीने के बाद क्या पड़े ही रहेंगे ? यह घृत उनकी रग-रग में बल और ओज का सञ्चार कर देगा ।

मध्वमृत की सूक्तियों में भी देखिए - सभी रमणीय हैं तथापि आदर्श के लिए तो कोई न कोई प्रदर्शित की जाती ही है -

"उत्साह-साहस-विशेष-समिद्ध-सत्त्वो
भोक्ष्येऽन्तराय-परिवर्जितमेतदायुः ।
एवं विचार-सरणौ रमणं न युक्तं
कालः कपाल-कलना-कवलाद एषः ।।"

यहाँ उत्साह और साहस से समिद्ध हुए सत्व वाला मैं मेरे शेष दिनों को निर्विघ्न भोगूँगा इत्यादि विचार करते रहना युक्त नहीं है क्यों कि कपाल की कल्पनाओं को यह काल ग्रास करता रहता हैं।

आगे उद्धृत उपमालङ्कृति भी बड़ी अच्छी गुम्फित हुई है । आगे की सूक्ति में यथासंख्यालंकार की शोभा देखने ही की है कि भीषण वर्षा के साथ झञ्झावात के तूफान आने के समय गगन में और संकट आ पडने पर दुष्टात्माओं के मन में एवं अन्तिम निर्णय करते हुए ओजस्वी मनुष्यों के हृदय में क्रम से निःस्तब्धता, जड़ता और सुतरां धीरता आ ही जाती है । अच्छे शब्दों में इसका निबन्धन हुआ है । वास्तव में यह सूक्ति मध्वमृत ही है ।

इसी प्रकार दुग्धामृत की इस सूक्ति को देखिए - यह भी दूध की तरह समुज्ज्वल और माधुर्यपूर्ण होती हुई शान्ति सुख प्राप्ति के लिए भोग साधनों की चञ्चलता के द्वारा त्याग का उपदेश करती हुई अपनी सत्त्वपुष्टि का प्रयत्न कर रही है-

"वित्तं मित्रं कलत्रं सुख-करण-दलं नश्वरं नोऽभविष्य -
ल्लोके चेत्कः कृती तत्परिवृति-विरहस्याऽपि नामाग्रहीष्यत्
सौख्यं यन्नास्ति नित्यं तदिह मतिमतां नम्रभावं विधत्ते
भोगानां चञ्चलत्वं प्रथयति जगति त्यागवृत्तेर्महत्त्वम् ।"

सचमुच भोगसुख अनित्य हैं । इनकी अनित्यता ही मानव में विनय और त्यागवृत्ति पैदा करती है । यह उक्ति दूध के समान है, पढकर अनुभव कीजिये ।

सात्त्विकी वृत्ति ही पुरुष का या स्त्री का सच्चरित्र बनाती है इस बात को भी आगे उद्धृत पद्य में पढ़कर कवि की मानसिक वृत्ति में सत्त्व का प्रकाश कितना है विदित कर लीजिये । यह सूक्ति भी दुग्धामृत की प्रतीक हुई है :-

"यावद्भोगाऽभिलाषं न भजति पुरुषः कामिनीनां कटाक्षे
तावन्नारी-शतानां शित-नयन-शतं चापि चित्तं न शास्ति ।
कामानामेष सर्गो दिशति रसिकता-गौरवं तत्सकाशे
चारित्रे हेतुभूता भवति तनुभृतां सात्त्विकी वृत्तिरेव ।।"

पढ़ लिखकर सावधान और जवान होने पर मनुष्य को धनोपार्जन करना ही चाहिए । यह न हो सका तो बुढ़ापे में असमर्थावस्था में पड़े-पड़े पछताने के अतिरिक्त अन्य कुछ भी लाभ न होगा इस उपदेश को दधि की तरह उज्ज्वल, उदात्त-भावभृत शब्दों में गुम्फित कर कवि ने कविता को आस्वाद्य बना दिया है । दध्यमृत का यह पद्य देखिये -

"धर्माचार-पुरस्सरं कुरु सखे ! द्रव्यार्जनं यौवने
तन्मार्गेषु पदे-पदे समुदिता बाधाः समुत्सादयन् ।
सामर्थ्यावसरे सुखाय सदनं नासादितं चेत्तदा
पश्चात्तापमृते भविष्यति तवान्यत्किंविधाख्यानकम् ? ।।"

नौकरी का (परतन्त्रता का) वर्णन करती हुई आगे उद्धृत दध्यमृत- सूक्ति, पढ़ने वालों के मन में दासता पर कितनी घृणा प्रकाशित करती है यह विचार से इसके पढ़ने पर स्पष्ट होगा । वाह! वाह!

"सेवा नाम निवृत्तसत्त्वगरिमा वृत्तिर्निकारो महान् ॥ ॥"

कैसा विराग उत्पन्न कर दिया है । इसे पढ़कर दासता को कौन स्वीकार करेगा ?

देह का मोह सुतरां दुस्त्याज्य है इस बात को आगे लिखी दध्यमृतसूक्ति में पढ़िये । दुःख पाते, अतीव पीड़ित होते हुए भी - अन्त समय में आँखों की पुतलियाँ ठहर गई हैं, भूमि पर उतार लिया गया है, प्रयाण का क्षण है तो भी -

"वाञ्छत्यन्तकवाञ्छितोऽपि जरठो भूयः स्वदेहस्थितिम् ॥ ॥"

यम के बुलाने पर भी बुड्ढा फिर देह को स्थित ही रखना चाहता है ! विचित्र है देह का मोह ! कभी नहीं छोड़ा जा सकता है ; विवश ही यह अपने को छोड़ जाता है ।

दुर्जन (धूर्त), सन्तों की नकल (विडम्बना) अपनी कीर्ति (ख्याति) बढाने के लिए करते हैं । ये केवल कीर्तिकामी होते हुए भी सन्तों की महिमा को तो आदर्श और अनुकरणीय ही बतलाते हैं ।

इनकी विडम्बना से भी सन्तों का माहात्म्य बढता ही है। कितनी सुन्दर बात को कितनी अच्छी रीति से समझाया है। आगे का पद्य देखें। चतुर्थ चरण तो याद ही रखने का है :-

"माहात्म्यं प्रतिपादयन्ति कपटाचारैरसन्तः सताम् ॥ ॥"

मैं तो इस चतुर्थ पाद के दूसरे पद को जो 'प्रतिपादयन्ति' है उसे 'परिवर्द्धयन्ति' करके पढता हूँ तो मुझे अतीव सुरम्य मालूम होता है। कवि के मूल का पाठ भी अशुद्ध नहीं है पर मुझको यही अच्छा लगा कि प्रतिपादन की अपेक्षा परिवर्द्धन ही करते हैं। वाह! धन्य है।

सितामृत-सूक्तियाँ भी सुरम्य हैं तथापि आगे लिखी सूक्ति पढ़िये जिसमें कालकलना से कामिनी के यौवन के विलास क्षण-क्षण बदलते हुए कुछ ही काल में कहाँ कैसे विलीन हो जाते हैं इस बात को समझाया है। युवतियों का यह रूप कैसा बनाया है - सुतरां रमणीय और सम्भोगयोग्य, कविकुलों का आन्दोलित करने वाला एवं समर्थ युवकों का मोहक, जगत् के स्वाभाविक मजबूत, धुरे सरीखा और जो इस तरह लोगों को अवस्था प्राप्त होने पर विकृत किये बिना नहीं रहता ऐसा प्रबल अनिवार्य अप्रतिकार्य भी युवतियों का यह रूप कितनी सी देर में कहाँ विलीन हो जाता है - हा! यह कहने में नही आता है। इस रूप की अस्थिरता से बड़ा कष्ट होता है इत्यादि।

आगे उद्धृत सितामृत-सूक्ति में ईर्ष्यावान् क्षुद्र हृदय वाले मानव का चित्र बतलाते हुए उस ईर्ष्या का फल प्रदर्शित किया है । क्या ही सुन्दर है ! संसार में क्षुद्र ईर्ष्यावान् कुपुरुष, धनाढ्य, विद्यावान् और अन्यान्य भोगसाधन-सम्पन्न तथा तपस्वी और प्रशंसावान् एवं गुणिजनों और कुलीनों की निन्दा करता हुआ, उनकी सम्पदाओं के भोग को आप स्वयं चाहता हुआ जो बातें बनाता है वह उसकी खुद की छुपी हुई लघुता को स्वयं ही स्पष्ट करता है । सच है बड़ों की निन्दा करने से लघु (क्षुद्र) मानव की क्षुद्रता स्वयं समुन्नत हो सबको स्पष्ट दिखाई पड़ती है । इस कारण कभी किन्हीं गुणी, महात्मा, विद्वान्, सुजनों की निन्दा नहीं करनी चाहिये यह सार सम्भृत हुआ । आगे लिखी सितामृतसूक्ति में –

"प्रकृति-चपले चेतसि वृथा कथा नित्य-प्रेम्णो युवति-विषये वा नृ-विषये ॥108॥"

लोग कहते हैं प्रेम ऐसा है, वैसा है, अविनाशी है । कुछ भी हो पर वह नित्य स्थिर नहीं है यह दावा कवि का सदा के लिए निश्चित है और इसका गुम्फन अच्छे ढँग से किया है । वास्तव में यह सूक्ति मिश्री (सिता) सी मधुर प्रतीत होती है । इस प्रकार से इस पुस्तक में एक सौ पर एक पद्य है । इसे उपदेश-शतक भी कह सकते हैं । उपदेश के आधार अच्छे गुण

ग्रहण कर ही रचना की गई है । संस्कृत-साहित्य में ऐसी रचनाएँ अच्छा प्रभाव डाल सकती हैं । समय-समय पर इनका प्रयोग करता रहे तो ये पद्य अवश्य ही प्रभावोत्पादक हो सकते हैं ।

हम तो इस पुस्तिका को देखकर कविपुण्डरीक पण्डित सम्पूर्णदत्त मिश्र को इसके लिए धन्यवाद और आशीर्वाद भी देते हुए यही कहते हैं कि आपकी इस पुस्तक का पर्याप्त प्रचार हो और सभी साहित्य-प्रेमी सज्जन सहृदय इसका आदर करें ।

आगे भी आप ऐसी साहित्य-सेवा जिससे संसार के साधारण भी मानव लाभ उठा सकें, सद्व्यवहार, सत् आचार, सद्विचार, सद्भावना को बढ़ावें और अपने कर्तव्य को पहचान कर भगवान् श्रीहरि के चरणों में भक्तिभाव बढ़ाकर परम पुरुषार्थ को प्राप्त करें, जनता के सम्मुख प्रस्तुत करते रहेंगे ।

इतिशम्

आश्विन कृष्णाष्टमी भृगुः
श्रीहरि शास्त्री दाधीचः
संवत् २०१६ विक्रमाब्दः ।
जयपुर ।

गोविन्ददास जी का बाग
रामनिवास बाग,
जयपुर (राजस्थान) ।

पुरोवाक्

(देवर्षि कलानाथ शास्त्री, राष्ट्रपति संमानित संस्कृत विद्वान् भूतपूर्व अध्यक्ष, राजस्थान संस्कृत अकादमी तथा निदेशक, भाषा-विभाग एवं संस्कृत शिक्षा विभाग, राजस्थान सरकार)

राजस्थान के वरिष्ठ रससिद्ध विद्वत्कवि कविपुण्डरीक पं0 श्री सम्पूर्णदत्त मिश्र संस्कृत जगत् में किसी परिचय की अपेक्षा नहीं रखते । संस्कृत, हिन्दी, अंग्रेजी और ब्रजभाषा के अधिकृत विद्वान् होने के साथ-साथ इनमें इन चारों भाषाओं में काव्य-सर्जन कौशल भी प्रभूत मात्रा में विद्यमान है इसका प्रमाण है इनकी इन भाषाओं में रची काव्य पुस्तकें जो समय-समय पर प्रकाशित होती रही है । इनमें से संस्कृत काव्य रचनाओं के ग्रन्थ या संकलन आप देखें तो पाएँगे कि उनमें मूल संस्कृत कविता के साथ कभी समच्छन्दोबद्ध कभी हिन्दी छन्दोबद्ध हिन्दी काव्यानुवाद भी इन्हीं का किया मुद्रित है और अंग्रेजी काव्यानुवाद भी। इसके अतिरिक्त ब्रजभाषा की इनकी काव्य रचना भी हाल ही में राजस्थान ब्रजभाषा अकादमी द्वारा प्रकाशित की गई है । यह इन चारों भाषाओं में इनकी प्रखर काव्य सर्जन दक्षता का निदर्शन है ।

ये राजस्थान संस्कृत अकादमी द्वारा विद्वत्कवि के रूप में संमानित किये जा चुके हैं । ब्रजभाषा अकादमी ने भी इन्हें संमानित किया है (ब्रजभाषा के वरिष्ठ कवि के रूप में) तथा अन्य अनेक संस्थाओं एवं आचार्यों ने भी पिछले दिनों रासनायकनायिकम्, रेवेश्वररञ्जना आदि इनके काव्य ग्रन्थ प्रकाशित और

समादृत हो चुके है । उसी क्रम में 'सूक्तिपञ्चामृतम्' नामक यह सुरुचिर काव्य ग्रन्थ अब आपके हाथों में है । ऊपर उल्लिखित दो काव्य तो स्तोत्र काव्य की श्रेणी में वर्गीकृत किये जा सकते हैं किन्तु यह पंचामृत विभिन्न भावभूमियों की, विभिन्न छन्दों में निबद्ध सरस मुक्तक कविताओं का संकलन है जिसमें अनेक स्वाद हैं, अनेक शैलियाँ, अनेक वर्ण्य विषय और कवि की अनेक दृष्टिभंगियाँ । वैसे कवि ने मोटे रूप में इन मुक्तकों को पाँच स्वादों में वर्गीकृत कर इस संकलन को पञ्चामृत कहा है जिसमें सर्वप्रथम घृतामृत आता है, फिर मात्रा में कुछ अधिक मध्वमृत, फिर पयोऽमृत (दुग्ध), फिर दध्यमृत और अन्त में वैपुल्य क्रम में सिताऽमृत (शर्करा) ।

संस्कृत भाषा की अजरामर काव्य रचना सहस्राब्दियों से इस देश में अक्षुण्ण चली आ रही है और आज भी सैकड़ों कवि संस्कृत की सुमधुर काव्य सर्जना में संलग्न हैं यह बात इस प्राचीन भाषा के संदर्भ में कुछ लोगों को आश्चर्यजनक लग सकती है किन्तु विज्ञजन जानते हैं कि यह अमर भाषा पुरानी होते हुए भी युवती है, वेद की उषा की तरह "पुराणी युवतिः"। कुछ सदियों पहले तक पुरानी परम्परा वाले कवि महाकाव्य अर्थात् प्रबन्ध काव्य लिखने में ही अपनी चरम उपलब्धि मानते थे । लक्षण ग्रन्थों में प्रबन्ध काव्य को ही महाकाव्य कहा भी गया क्योंकि कालिदास आदि बड़े-बड़े कवियों

ने महाकाव्य लिखने में रुचि ली थी (वैसे अन्य काव्य भी उन्होंने लिखे ही थे)। उस युग में घंटों, दिनों और हफ्तों बैठकर काव्य पढ़ते रहने की क्षमता पाठकों में थी भी किन्तु जब से भर्तृहरि और अमरुक तथा विज्जिका और विकटनितम्बा जैसे रचना धर्मियों के हृदयग्राही मुक्तक सामने आने लगे जो एक पद्य में दो क्षणों में ही कथ्य की सुरुचिर परिणति करके अद्‌भुत रस सागर में पाठक और श्रोता को गोते लगवा देते थे तब से मुक्तक को महाकाव्य से भी ऊँचा माना जाने लगा।

आनन्दवर्धन आदि अनेक मार्मिक आचार्यों ने पाया कि सरस मुक्तक के आगे महाकाव्य भी कुछ नहीं। प्रसिद्ध है -

"अमरुककवेरेकं पद्यं प्रबन्धशतायते।"

जयदेव के बाद से तो मुक्तककारों ने जो छाप छोड़ी उसके कारण महाकाव्य फीके पड़ गये। विश्वकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने नोबेल पुरस्कार जीत लिया, कालजयी विपुल काव्य रचना की, पर एक भी तथाकथित महाकाव्य याने प्रबन्धकाव्य नहीं लिखा। प्रबन्धकाव्य लिखने वाला ही महाकवि कहलाता है इस घिसी पिटी लकीर को पीटनेवालों ने जब उनसे पूछा कि आपने प्रबन्ध काव्य क्यों नहीं लिखा तो उन्होंने जो उत्तर दिया, बड़ा दिलचस्प और साहित्य जगत् में बहुचर्चित है। उन्होंने कहा - मैंने प्रयत्न तो किया था एक मोटा सा प्रबन्ध काव्य लिखूँ।

बड़े पद्यों का पुलिन्दा लेकर वाग्देवी के पास गया पर वाग्देवी ने जो मुक्त लास्य किया उससे उनके नृत्य के नूपुरों के प्रहार से सारा पुलिन्दा बिखर गया, घुँघरुओं ने सब पद्यों को मुक्तक बना दिया ।

मेरे पिता कविशिरोमणि स्व0 भट्ट श्री मथुरानाथ शास्त्री ने भी जो अनेक भाषाओं के रससिद्ध कवि थे और जिनका काव्य अनेक सहस्र पद्यों, शताधिक छन्दों और बीसियों शैलियों में फैला हुआ है, कोई महाकाव्य नहीं लिखा । वे मुक्तक को या एक भावभूमि के सरस पद्यकुलक को ही रसमय काव्य कृतित्व का निकष मानते थे । कविपुण्डरीक पं0 संपूर्णदत्त जी पर उनका भी स्नेह था । जब पं0 संपूर्णदत्त मिश्र के ऋतूल्लास और सूक्तिपञ्चामृत (प्रारम्भिक संस्करण) आदि काव्य प्रकाशित हुए थे तो उन्होंने इनमें विपुल संभावनाएँ पाई थीं और अपनी प्रशंसा से इन्हें अभिषिक्त किया था ।

अपने कुछ मुक्तकों को 1959 में संकलित कर इन्होंने सूक्तिपञ्चामृतम् शीर्षक से काव्य पुस्तिका प्रकाशित की थी । उन मुक्तकों में से कुछ इस संग्रह में भी शामिल हैं पर पूरे निखार के साथ पुनः सृष्ट, पुनरीक्षित, परिशोधित रूप में और हिन्दी व अंग्रेजी काव्यानुवाद के साथ । अतः इस काव्य संकलन का स्वाद अनूठा ही है । ऐसे मुक्तक महाकाव्यों से भी बढ़कर होते हैं इसका प्रमाण इन

मुक्तकों में आप खोज सकते हैं । प्रत्येक अमृत अलग-अलग छन्द में (क्रमशः मन्दाक्रान्ता, वसन्ततिलका स्रग्धरा, शार्दूलविक्रीडित और शिखरिणी) निबद्ध है । अतः इस काव्य में विषय-वैविध्य के साथ-साथ छन्दो-वैविध्य भी दृष्टिगोचर होता है यह मैं पहले कह चुका हूँ । आज के युग की विसंगतियाँ, देशदशा, काल की गति, जीवन के वास्तविक प्राप्तव्य का विवेचन, नेताओं , धनपतियों आदि को उद्‌बोधन आदि युगसत्य के उद्‌बोधक विषयों पर जहाँ कवि ने लेखनी चलाई है वहाँ सौन्दर्य , शृङ्गार, मिलन, विरह आदि विषयों को स्पर्श करने वाली वात्सल्य भक्ति आदि भावनाओं से भरी तथा सुभाषित की श्रेणी में आने लायक सदुक्तियाँ भी निबद्ध की हैं । इन सब कथ्यों के ताने बाने से यह मुक्तक संकलन गुम्फित है । कथ्य के साथ साथ शिल्प का वैविध्य भी अवलोकनीय है । अर्थालंकार और शब्दालंकार, दोनों की छटा इसमें देखने को मिलेगी । जहाँ शब्द साम्य और अनुप्रास का चमत्कार इसे एक विशिष्ट स्पर्श देता है (जैसे पद्य सं. 45) वहाँ अर्थान्तरन्यास, काव्यलिंग, रूपकादि अलंकारों, विशेषकर वक्रोक्ति की श्रेणी में आने वाली प्रखर उक्ति-भंगी भी इसे एक अलग पहचान देती है ।

संस्कृत के पाँच सुप्रतिष्ठित छन्दों में निबद्ध ये 111 पद्य संस्कृत में सदियों से चली आ रही शतक

परम्परा का एक नमूना भी प्रस्तुत कर सकते हैं क्योंकि अमरुक और भर्तृहरि के समय से ही 100 या 100 से अधिक पद्यों में शतक लिखने की जो परम्परा चली आ रही है उसमें भी सौ से कुछ अधिक पद्य ही शामिल किए जाते हैं, चाहे उसका नाम शतक ही क्यों न हो । किन्तु उसमें प्राय: एक विषय विशेष की कविता संकलित होती है जिसका निदर्शन है नीतिशतक, शृंगार शतक या वैराग्यशतक जो क्रमश: नीतिविषयक, शृंगारविषयक और वैराग्यविषयक मुक्तकों के संकलन हैं चाहे उनमें अनेक छन्दों का प्रयोग हुआ हो ।

सूक्तिपञ्चामृत को संपूर्णदत्त जी से शतक आदि न कह कर पाँच खंडों में बाँटा है तथा पद्य संख्या प्रत्येक अमृत में क्रमश: वर्धमान रखकर पद्यों के वर्गीकरण को एक नई शैली दी है जो अपने आप में अनूठी कही जा सकती है । ये पाँच विभाजन पंचामृत की प्रकृति के अनुसरण में हैं जिनका आस्वाद अलग अलग होता है जबकि ये पाँचों अपने आप में रसनीय और तृप्तिदायक होते हैं ।

पद्यों का कथ्य क्या है इसका संकेत प्रारंभ में उनके उपशीर्षक द्वारा दे दिया गया है जो पाठक के लिए प्रीतिकर भी होगा, रुचिकर भी और सुविधाजनक भी । इन शीर्षकों से भी विषय वस्तु का व्यापक विस्तार स्पष्ट हो जाता है । कहीं आज की

विडम्बनाओं पर प्रहार है (65,66) तो कहीं अपनी प्रिय गाय के वियोग के अनन्तर आने वाली उसकी याद में स्वभावोक्ति निबद्ध है (पद्य सं. 68) कहीं कवि और काव्य पर कवि के उद्गार है (90,91), कहीं वात्सल्य रस की छटा है (93) ।

काव्यानुवाद –

रसज्ञ पाठकों को जो पक्ष इस पंचामृत में सर्वाधिक चमत्कृत करेगा वह है इसका काव्यानुवाद । स्वयं कवि का किया हुआ हिन्दी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं में निबद्ध यह काव्यानुवाद अनेक दृष्टियों से अनूठा है । हिन्दी के काव्यानुवाद की विशेषता तो यह है कि यह समच्छन्दोनुवाद है, संस्कृत के उसी छन्द में हिन्दी काव्यानुवाद किया गया है अतः संस्कृत और हिन्दी दोनों पाठों को पढ़कर लय और यति-गति की समरसता का एक अलग ही आस्वाद बन जाता है ।

हिन्दी में संस्कृत छन्दों के गुम्फन की सुदीर्घ परम्परा रही है । हरिऔधजी का 'प्रियप्रवास' महाकाव्य जिसने देखा है उसे संस्कृत छन्दों में निबद्ध हिन्दी काव्य का आस्वाद ज्ञात होगा ही । वैसी रचना मैथिलीशरण गुप्त, महावीर प्रसाद द्विवेदी जैसे अनेक विख्यात कवियों ने की । स्वयं प्रसाद ने संस्कृत छन्दों में कुछ पद्य लिखे । धीरे-धीरे यह प्रथा समाप्त हो गई क्योंकि इसके लिए संस्कृत और हिन्दी दोनों भाषाओं का अध्ययन आवश्यक होता है, साथ ही रचना शिल्प पर अधिकार और अभ्यास भी अपेक्षित होता है । नई चाल के कवियों में वह

होता नहीं अतः नई कविता वाले इस प्रथा को पुराणपन्थी या हेय बतलाने के अनेक आधुनिक आधार खोजकर उसे कालातीत और द्विवेदीकालीन करार दें, यह स्वाभाविक ही था । तब से इस परंपरा का परिज्ञान लुप्त हो गया । इस शिल्प की जो कसावट, जो कठिनाई चुनौती बनकर सामने आती है उससे भुक्तभोगी ही परिचित हो सकता है । उस पर विजय पाते हुए कविपुण्डरीक ने यति-गति पर खरा उतरने वाला जो संस्कृत छन्दोबद्ध हिन्दी काव्यानुवाद किया हुआ है वह अपने आप में पठनीय है ।

इस अनुवाद में अनेक भाषिक प्रयोग देखने को मिलेंगे । एक यह अनूठा प्रयोग भी शायद कुछ सुधी पाठकों को चमत्कृत करेगा कि अन्त्यानुप्रास की प्रथा जो संस्कृत छन्दों में नहीं है, हिन्दी काव्यानुवाद में कवि ने बहुत से पद्यों में अपनी ओर से जोड़ दी है । उदाहरणार्थ शार्दूलविक्रीडित छन्द में पहले और दूसरे चरण में चौवनवें पद्य का यों काव्यानुवाद किया है -

''संपत्संचय की न शक्ति............जान के।'' 54

यहाँ 'घूमता' और 'चूमता' का तुकान्त तथा 'तान के' और 'जान के' का तुकान्त छन्दः-शास्त्र द्वारा तो विहित नहीं किया गया, कवि ने अपनी ओर से जोड़ा है, कवि ने इससे अपनी कठिनाई बढाई है किन्तु इससे काव्य-सौष्ठव और शब्द-शय्या का लालित्य भी अवश्य ही बढ़ गया है । 55 वें और 56 वें छन्द में भी इसी प्रकार तुकान्त योजित है ।

कहना न होगा कि हिन्दी काव्यानुवाद की मिश्रजी की छन्दो-रचना विशुद्ध है, उसमें उर्दू की तरह उच्चारण को लघु-दीर्घ बनाकर गति नही बिठानी होती, गण और लघु-गुरु का वजन ठीक बैठता है अत: उच्चारण में जरा भी असुविधा नहीं होती । इस काव्यानुवाद के लिए कविपुण्डरीक शतश: बधाइयों के हकदार हैं । इसके विविध पक्षों की, इसमें अनेक टकसाली तथा आंचलिक शब्दों को जडकर भाषा को नये आयाम देने की समीक्षा की जाए तो बहुत विस्तार हो जाएगा । वैसे भी "न हि कस्तूरिकामोद: शपथेन विभाव्यते" के अनुसार स्वयं पढ़कर देखने से ही स्वोपज्ञ काव्यानुवाद (और मूल काव्य का भी) का वैशिष्ट्य समझ में आ सकता है अत: इस पर अधिक नहीं लिख रहा ।

अंग्रेजी काव्यानुवाद भी कवि का स्वोपज्ञ है, अपना है । मूलत: अंग्रेजी के सुप्रथित छन्द में निबद्ध यह काव्यानुवाद भी कवि के अंग्रेजी और अंग्रेजी छन्द: शास्त्र पर अधिकार का प्रमाण है । यह अनुवाद "**Iambic pentameter**" में निबद्ध है और **a a, b b** के ढाँचे से तुकान्त बद्ध है । इसे "हीरोइक कप्लेट" कहा जाता है । अत: इसे यों भी समझा जा सकता है कि प्रत्येक संस्कृत पद्य का अंग्रेजी में काव्यानुवाद दो-दो हीरोइक कप्लेटों द्वारा किया गया है । इसमें भी आयम्बिक पेंटामीटर की सुगठित पंक्ति में अनुवाद का गुंफन, फिर राइम

अर्थात् तुकान्त का निर्वाह, पूरे पद्य के भाव को चार पंक्तियों में समाविष्ट कर देना, इन सब चुनौतियों का सामना करते हुए एक विदेशी भाषा में काव्यानुवाद कितना कठिन हो सकता है, यह सहज ही समझा जा सकता है किन्तु संपूर्णदत्त जी ने अंग्रेजी कविता का, साथ ही छन्दः शास्त्र का जो गहन अध्ययन यौवनकाल में किया है उसके कारण उन्होंने एक अन्तर्दृष्टि भी अंग्रेजी छन्दःशास्त्र और भारतीय छन्दःशास्त्र के उत्सों पर विकसित कर ली है, यही कारण है कि वे इन चुनौतियों का सामना सहजता से कर काव्यानुवाद में भी स्वोपज्ञ विशिष्टता समाहित कर देते हैं ।

हम लोग तो यह मानते हैं कि संस्कृत जैसी प्राचीन, सुगठित, वैज्ञानिक और विराट् भाषिक संरचना वाली भाषा में काव्य रचना की क्षमता किसी अलौकिक शक्तिपात, साधना या आशीर्वाद के बिना विकसित नहीं हो सकती । पं० संपूर्णदत्त मिश्र महाशक्ति महाविद्या की साधना में परंपरा से दीक्षित हैं तथा पं० अमृतवाग्भवाचार्य जैसे तपःपूत प्रज्ञाधन मनीषियों के स्नेहाशीर्वादों की निधि के धनी हैं, साथ ही अनवरत उपासना तथा काव्य संरंभ के अभ्यासी हैं । तभी इस प्रकार की बहुभाषीय काव्य रचना के अवदान से समाज को समृद्ध करते रहते हैं। इनका यह नवीनतम अवदान भी संस्कृत जगत् में स्वागत और संमान प्राप्त करेगा, इसमें सन्देह नहीं ।

सी-8 पृथ्वीराज रोड, जयपुर ।

FOREWORD

Devarshi kala Nath Shastri, Ex-Chairman, Rajasthan Sanskrit Academi and former Director, Bhasha Vibhag and Sanskrit Education, Govt. of Rajasthan.

To an enlightened Sanskrit Scholar of India who is aware of the contemporary creative efflorescence in Sanskrit, Kavi Puṇḍarīkaḥ Pt. Sampūrṇa Datta Miçra needs no introduction. He, already the author of many a memorable Sanskrit poem of repute has enthralled the audience at so many Sanskrit Kavi-sammelanas by his mellifluous renderings of Sanskrit poems and has been honouned by the State Government, so many Sanskrit Organisations and other literary Associations including the Rajasthan Sanskrit Academy and the Rajasthan Brij Bhasha Academy. The Sanskrit Academy honoured him in 1997 as a Sanskrit Scholar. The Brij Bhasha Academy has recently brought out a monograph on the life and works of Shri Miçra comprising *inter alia* his poems in Brij Bhasha. It is a matter of pride that he possesses

equal command over Sanskrit, Hindi, Brij Bhasha and English enabling him to write poetry in all these four languages. Writing poetry in an ancient language like Sanskrit is not everybody`s cup of tea. It requires enough erudition and a lot of toil by way of mastering the ediom proper for poetising. Besides this, as traditional Pundits believe the talent and the skill of composing poetry in Sanskrit can not be achieved without some spiritual acquisition, inspiration or intuition. That Pt. Miçra is endowed with such spiritual powers and intuition in a great measure is no secret now as we know that he had been initiated into the cult of Mahavidya Worship and has also been blessed by great preceptors like Shankaracharyas and Shri Amrita Vagbhavacharya.

Sanskrit Scholars are aware of his poetic Works like Ṛtūllāsaḥ, Rāsa-Nāyaka-Nāyikam, Reveçvara-Rañjanā etc.. He had published some of his small poems under the title of Sūkti-Pañcāmṛtam as early as 1959. It is a matter of great pleasure that those poems and many others besides them will

now be available to the Sanskrit world and that too in an entirely revised form, much elaborated in numbers and accompanied with a mellifluous translation of each verse in Hindi in the same meter and also in English in Heroic Couplets. These translations enhance the pleasure of the reading of the original verse and also the acceptability of the same in a much greater clientele. That the translations made by the author himself are authentic and equally treasurable needs no emphasis. They also speak volumes of the poetic competence and the wide range of creativity of the poet with the command over languages other than his mother tongue and the national language. The poetic translations have acquired a palatability of their own which, I hope, would satisfy the readers of a wide variety.

The long drawn belief of the old days in Sanskrit circles of the country that the epithet of Mahakavya can be given to an epic poetry alone and the adjunct of Mahakavi should be customary with the writer of an epic poem only was negated by the

effulgence and creative excellence of small poems like those of Amaruka, Bhartrihari and Jayadeva and since then a Muktaka (Small poem) self-contained and compact in itselt is considered to be the toughstone of great lyrical poetry. Acharya Mishra has offered us a rich, fragrant and sweet bunch of such 111 poems containing a rich variety of moods, themes, styles and attitudes. He calls it a confluence of 5 nectars of 5 sweet tastes. These five tastes are offered by the poet pouched in 5 different meters- मन्दाक्रान्ता in the first group of poems, वसन्ततिलका in the second, स्रग्धरा in the third, शार्दूलविक्रीडित in the fourth and शिखरिणी in the fifth. The poems in the five sections are adjusted in order of increasing numbers.

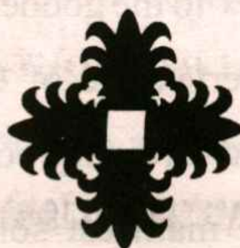
Since these are self-contained poems each of them has a flavour of its own as also its content, its message, its style, its mood. A variety of messages and expressions will be manifest as you go through these 111 verses. Some of them portray the bitterness of the present-day life, some of them hit at the

machinations of the present-day politics and the crooks of the society while some render a salutary advice to the sane reader. You will find in one of the poems the sweet memories of the departed friendly cow गौरी cared by the poet all life and sometimes a description of futility of the mundane pursuits of creative comforts. Obviously some of the verses are devoted to the glorification of spiritual inspirations and the ecstasy of divine experience. Quite a few are offered as a स्तोत्र to the goddess, the favourite deity of the poet. Every verse of सूक्तिपञ्चामृतम् is expressive of the extra- ordinary poetic abilities of its author. These are manifest sometimes in the choice of worlds, syllables and phrases, sometimes in the metaphors and embellishments, sometimes in the unique style of telling and sometimes in the intensity of feelings. such and other attributes of the poetry of Sampūrṇa Datta Miçra have won the praise of many scholars, sages, critics and leaders of thought, not only in India but also abroad. Such admirations can be seen in the letters, sometimes

couched in the verses of Sanskrit, addressed to him by Sanskrit scholars, Shankaracharyas and Professors of western universities. I have no doubt that this fresh venture of Acharya Mishra will be received with equal, if not more admiration and acclaim and will win an eternal renown for the poet.

C/8, Prithvi Raj Road

Jaipur-302001



अथ

सूक्ति-पञ्चामृत-वृत्तानामवतरणिकाऽनुक्रमणिका।

क्रमाङ्क | तत्र सूक्ति-घृतामृतम् | पृष्ठाङ्क

सूक्ति-मध्वमृतं तत:

तत: सूक्ति-पयोऽमृतम्

सूक्ति-दध्यमृतं ततः

तत: सूक्ति-सितामृतम्

अथ सूक्तिपञ्चामृतम्

मङ्गलाचरणं कवे:

लक्ष्मीकान्तप्रवणनयना वैष्णवी शक्तिरेषा
रूपोत्कर्षस्फुरणचकिता चोदयेत्तान्कटाक्षान् ।
अस्मास्वेवं व्यवसितमतिर्मिश्रसम्पूर्णदत्तो
युक्त्यात्मानं स्नपयति सुखं सूक्तिपञ्चामृतेन ।।1।।

कवि मङ्गल-कामना

श्री स्वामी का मुख निरखती वैष्णवी शक्ति लक्ष्मी
मेरे रूपोदय-चकित हो ओर मेरी निहारे ।
ऐसे शोभा-सव-सवन को मिश्र सम्पूर्ण शर्मा
मै बैठा हूँ स्नपन करने, सूक्ति-पञ्चामृतों से ।।1।।

The auspice verse:

Lord Viṣṇu`s spouse, attracted by my form,
Should see me constantly, So I perform
The mystic bath of my self, well, with the
Pañcāmṛtam of my pet poetry. 1.

तत्र सूक्ति-घृतामृतम्।

प्राणा एव स्त्रियो नृणाम्

यत्संयोगो मनसि मधुरं किञ्चिदिष्टं प्रसूते
वैकल्यं वा कलयति कलं नृष्वलं यद्वियोगः ।
यद्भ्रूभङ्गो रहसि। रसिक-प्रार्थना-सूत्रधार -
स्तत्स्त्रीसत्त्वं प्रणयि-पुरुष-प्राण-पर्याय-वाचि ।।2।।

मीठी-मीठी, मिलन जिनका, कामनाएँ जगाता,
वैकल्यों को, वियुति जिनकी, जन्म दे डालती है ।
हाहा खायें, रसिक, जिनकी भ्रूकुटी के पछाड़े,
वे स्त्री-प्राणी, प्रणयि-नर के, प्राण-पर्याय-वाची ।।2।।

Whose meeting rouses mind to sweetness sound,
Sep'ration restlessness where rest is found,
whose frownings form the fondlers` fancies rife,
The ladies are the synonyms of life. 2.

कामिन्यः कामि-कार्मणम्

दूरादेवोल्लसति युवतीसक्तचित्तानुयायी
भूयो भूयः सुमहति समुत्क्षिप्य चक्षुर्नितम्बे ।
काम्यस्त्रीणामधररमणोत्कण्ठितः कामिलोकः
सत्यं पुंसां प्रणयकलनाकार्मणं कोमलाङ्ग्यः ।।3।।

कामी होते मुदित, युवती देखते, दूर से ही,
कूल्हों में ही नयन, मुड़के, गाड़ते ना अघाते ।
काम्यस्त्री के अधर-रमणानन्द का चाव लेके ।
मृद्धङ्गी का प्रणय, सच है, कामियों का विधाता ।।3।।

The lustful men look at young ladies` hips,
Their wistful faces, longing for their lips,
Engaged with them in mental intercourse.
Of Course, young girls are young men's pleasing source.3.

स्नेह-चित्रं पितुः शिशौ

अप्यन्यत्र प्रहितकरणः कश्चनोद्वीक्ष्य पत्न्याः
कोपोत्तुङ्ग-भ्रुकुटि-रचनाऽऽतङ्कितं स्वं कुमारम् ।
'तू तौ मालै' तदिति जननीमीरयित्वा विरक्तं
'ना मालैगी' सपदि कथयन् हन्त! केनोपमेयः? ।।4।।

अन्यत्कर्मारत जनक ने ज्यों उठा आँख देखा
भौहें ताने सभय शिशु को भामिनी डाटती थी ।
'तू तौ मालै' यह कह डरे पुत्र को देखते ही,
'ना मालैगी' त्वरित कहते बाप को क्या कहोगे? ।।4।।

Some busy father saw his child subdued
By wife's free frowning, bearing helpless mood.
'Tū tau mālai', the son said, with a stare.
'Nā mālaigī ', said dad, the matchless care ! 4.

भाग्यासक्ति-विनिग्रहः

संन्यासं नो सुभग! भज सा साहसाऽऽप्या समृद्धिः
कातर्येणोन्मथितमतिकैः कैरवाप्ता वराकैः?
वीरप्राप्या यदि सुखकरा वाञ्छिताः सन्ति भोगा
उत्साहानां विचर सरणौ भाग्यचर्चां निकृत्य ॥5॥

संन्यासी तू न बन, वसु तो साहसी का सखा है,
दीनाचाराकुलित किसने सम्पदा है सकेली ?
वीरों के से सुभग सुख के भोग जो चाहता तो
उत्साहों की सरणि गह ले, भाग्य की छोड़ चर्चा ॥5॥

Despise inertness, riches love the bold :
What wretched cowards won the plenteous gold?
So if you long for heroes` comforts great,
Invoke exertion : leave the talk of fate .5.

दरिद्राणां प्रधर्षणम्

ये चाऽप्यस्मिञ्जगति विधिना साधिताः सम्पदाढया-
स्तेम्यः सक्ताः शतशतमुखैः शापदाने दरिद्राः ।
क्रोधोन्मत्तान्धनविरहितान्तानहं प्रष्टुकामो
जातात्यन्तं भुवि सुजनता कस्य वा धर्मपत्नी ? ।।6।।

जो जन्मे हैं कलित कुल में सम्पदाधारियों के
सौ-सौ आस्यों, अधन उनको कोसने में लगे है।
ऐसे क्रोधी अधन जन से पूछना चाहता मैं --
बोलो, सत्ता सतत किसकी धर्मपत्नी बनी है? ।।6।।

'Tis seen that poor men have an abject craze :
They curse the rich God-made, in hundred ways.
I ask the furious poor to let me know
Who, for the good , does keep a wife-like vow ?.6

सावधानत्व-मन्त्रणा

भृत्यो मित्रं दृढपरिचितो वा भवेत्कोऽपि वाऽन्यः
कस्याऽप्यग्रे प्रकृतमनसा नात्मदोषाः प्रकाश्याः ।
येऽद्य प्रीता मधुरवचनैः पूजयन्तीव मित्रं
श्वस्ते रुष्टा न खलु न करिष्यन्ति मित्रापवादम् ।।7।।

चाहे कोई सुपरिचित हो, भृत्य-मित्रादि भी हो,
दोषों को ना पुरुष अपने सर्वथा यूँ बखाने ।
मीठे-मीठे वचनबल से आज जो पूजते से,
निन्दाकारी न खल कल हो जायँगे क्या भरोसा ? ।।7।।

Disclose your faults to no one, if he be
your servant or a man of privacy.
It is not sure that, after changing hue,
Your present praisers will not censure you. 7.

सतां सन्तापकारणम्

दृश्यन्ते ये सुजन! सुजना दुःख-सन्ताप-मग्ना
जानीह्येतान्विगतजनुषां पापिनोऽत्र प्रसूतान् ।
तेऽद्य स्वाघ-प्रतिफल-वशात्सौख्यमाप्तुं न शक्ताः
प्रायो दृष्टं कलियुग इदं साधुसृष्टे रहस्यम् ।।8।।

सन्तापों से व्यथित जितने सज्जनों को निहारो
जानो पापी प्रकट उनको जन्म-जन्मान्तरों के ।
पापों का ही कुफल उनके जो न होते सुखी वे ।
प्रायः ऐसी कलियुग-कला सज्जनों में लखी है ॥8॥

The good men, pained and having lost their mirth,
Must have been sinners of their past last birth.
Their ill fates are the fruits of their past sins.
Good men's hard lives, the Kali, so oft, spins.8.

सौजन्यं पाप-सम्भवम्

यत्सारल्यं सुकृतिमहतां मण्डनं मानवानां
ये चाऽप्यन्ये सुकवि-कथिताः सद्गुणाः सन्ति लोके ।
जायन्ते ते क्वचिदपि यदा दुःखदाः सज्जनानां
सौजन्यं तद्विगतजनुषां पातकानां प्रसूतिः ।।9।।

पुण्यात्मा का प्रथित गहना श्रेष्ठ सारल्य जो है,
जो-जो भी है सुकवि-वरणे सद्गुणों की कहानी ।
वे ही सारे सुगुण जब हा! दुःख दें सज्जनों को,
ऐसी सत्ता, प्रसव, पिछले जन्म के पातकों की ।।9।।

When honesty, the ornament of Man
Or well-known goodness that good poets pen,
Becomes the cause of pious people`s pains,
It is the yield of past-birth-sins and banes. 9.

सूक्ति-मध्वमृतं ततः

सौभाग्योदय-कारणम्

भाग्याश्रितानि भुवि दुःख-सुखानि मत्वा
धर्मार्थ-काम-सुख-साधन-तत्पराणाम् ।
वक्रे विधावपि नृणां कमला-पराणां
सौभाग्यमुद्भवति सद्दययाऽऽदिदेव्याः ।।10।।

भाग्याप्त दुःख सुख मान चले नरों का,
धर्मार्थ-काम-सुख-साधन-तत्परों का,
दुर्भाग्य से व्यथित भी कमला-परों का
देवी-दया-वश सुभाग्य उदीर्ण होता ।।10।।

Men, deeming pleasures, pains, the fruits of fate,
Engaged for dharm', arth', Kam', in efforts great,
In spite of bad luck, loving Lakṣmī 's face,
Secure good fortunes here by Devī 's grace.10.

भविष्यं नहि विश्वसेत्

उत्साह-साहस-विशेष-समिद्ध-सत्त्वो
भोक्ष्येऽन्तराय-परिवर्जितमेतदायुः ।
एवं विचार-सरणौ रमणं न युक्तं
कालः कपाल-कलना-कवलाद एषः ॥11॥

उत्साह-साहस-भरा करता रहूँगा
निर्विघ्न भोग जन-जीवन में सदा मैं ।
ऐसे विचार करते रहना न अच्छा,
सङ्कल्प के कवल काल करे कलेवा ॥11॥

' With fortitude and Hope's hilarious bents,
I'll lead this life, without impediments. '
None ought to hail such notions in advance.
Time feeds on Fancy's morsels and good chance.11.

रम्या वेलाऽपि निष्फला

दारिद्र्य-दु:ख-परिहार-विचारकस्य
रम्यापि राग-विनिवर्तित-चित्त-वृत्ते: ।
वेला प्रयाति मम मोदमनुद्वहन्ती
षण्ढस्य भोग-विधुरा नव-सुन्दरीव ।।12।।

दारिद्र्य-दारण-उपाय-विचारते की
हो रम्य भी, रति-निवर्तित-चित्त मेरी ।
वेला चली सटक व्यर्थ विषाद-भेटी
लेटी नपुंसक-सटी नवसुन्दरी सी ।।12।।

Absorbed in thoughts of thwarting poverty,
I am compelled to check myself from glee.
My dear days pass without a merriment
Like a maid laid by a man impotent. 12.

सङ्कोच-नम्र-मुखमुन्नमनाय यासां
विस्रम्भतः प्रहतमूरु-तलं कराग्रैः ।
तासां तु साम्प्रतमनङ्ग -समुद्धतानां
सम्बोधनं हि समुपक्रमितुं न जाने ।।13।।

संङ्कोच-नम्र जिनके मुख को उठाने
जाँघों तले अँगुलियों थपकी लगाई ।
मैं आज देख उनकी मचली जवानी
संवाद का सहज साहस खो गया हूँ ।।13।।

Sometimes, to raise the face of modest maids
I struck their thighs, with thumps of gentle grades.
Today, when their exalted youth is viewed,
Addressing them, I find myself subdued. 13.

रूप-केन्द्र-समीक्षणम्

नो कुण्डला न च कचा न कुचा नरीणां
यूनां मनो ननु हरन्ति तथा यथाऽऽसाम् ।
नासाग्र-रत्न-चिबुकाऽधर-सन्निधाने
स्निग्ध-स्मिताऽञ्चित-कपोल-कलांशु-कल्पाः ॥14॥

ना कर्ण-कुण्डल, पयोधर, केश काले
वैसे युवा पुरुष के मन को रिझाते ।
नासाग्र-रत्न-चिबुकौष्ठ-समीप जैसे
स्निग्ध-स्मिताञ्चित-कपोल-कला-किनारे ॥14॥

No ear-rings, no locks nor the swelling breast
Arouse, in young men, so much interest
As near nose-gem, chin, lips and sportive goads,
The blushing Cheeks, with their sweet smiling modes.14.

यावल्ललाम-महिला-मुख-मुद्रिकास्ता-

शिचत्ते मधु-क्षरण-सम्मित-सौख्य-मूलाः ।

स्मर्त्तु भवामि तरसा बत कल्पना मे

तावद्विलीयत इव स्मृति-कन्दरासु ।।15।।

मुस्का रही युवति की उन भङ्गियों को,

घोलें मिठास, मुख की उन तंगियों को ।

मैं ढूँढने जब चला तब कल्पना ही

हा! खोगई थिरकती स्मृति-कन्दरा में ।।15।।

As I`m to grasp the smiling lady's grace,

My honeyed heart sets off her charming face.

Lo ! as I come to comprehend its kind,

My fancy's lost, within the caves of mind .15.

सौख्यावह-स्वजन-संसदि जीवतो मे
चित्त! त्वमेव परमं शठ! शत्रु-भूतम् ।
यन्मां पुनर्भुवन-नश्वरता-स्वभावं
संस्मारयद्विचलितं कुरुषे ह्यकाले ।।16।।

जीते हुए स्वजन-सङ्गम के सुखों में,
ओ चित्त, तू बन गया, शठ, शत्रु मेरा ।
जो बार बार भव की लय-शीलता की
यूँ ही मुझे स्मृति दिला रहता रुलाता ।।16।।

Residing with peace, with my family,
'Tis you, my heart, that turns my enemy,
Reminding me of fleeting phase of all,
you, oddly, me, in restlessness, enthral. 16.

क्रान्ति-विघ्नस्य कारणम्

मायाविनं पतित-शासक-वर्गमेते
कुर्युर्विनष्टमनवद्य-धियः क्षणेन ।
वीराः पराः परमयं पिशुनोऽल्प-तुष्टः
क्रान्तिं विलम्बयति लुब्धक-तुच्छ-वर्गः ।।17।।

माया-भरे पतित-शासक-वर्ग को ये
तत्काल नष्ट कर दें वर वीर बाँके ।
जो क्रान्ति के कलन-बीच विलम्ब लाने
दौड़ें नहीं पिशुन मानव तुच्छ लोभी ।।17।।

The great, wise heroes could eliminate
The mean, conspiring Heads of any State,
But for the greedy laity, taking bribes,
Impeding sharp revolting public drives. 17.

शासका राष्ट्र-घातका:

गेहस्थ-धर्म-निरता: प्रतिभा-विशिष्टा
नीचाऽधिकार-पतिता प्रभवन्ति नो चेत् ।
आत्म-प्रकाशमभिसारयितुं समग्रं
दुष्टाऽऽधिपत्य-कृत-राष्ट्र विनाश एष: ।।18।।

जो सद्गृहस्थ अपनी प्रतिभा निराली
नीचे पदों पर पड़े न दिखा सकें तो
प्रत्यक्ष रूप यह देश-विनाश का है
दुष्टाधिपत्य इस दुर्गति का विधाता ।।18।।

The best brains, burdened by the house-hold work,
In lanes of lower posts, positions, lurk.
If such men are not put to proper call,
'Tis Head of nation's fault and nation's fall. 18.

वात्याऽन्तिके वियति भीषण-वर्षणाग्रे
दुष्टात्मनां मनसि संकट-सन्निधाने ।
ओजस्विनामुरसि निर्णय-काल ऐति
निःस्तब्धता च जडता च सुधीरता च ।।19।।

आकाश ठीक पहले घन-आँधियों के,
पापी मनुष्य-मन सङ्कट पास आते ।
ओजस्वि-वीर-उर निर्णय की घड़ी में,
निःस्तब्ध और जड और सुधीर होते ।।19।।

The sky is quiet just before the storms.
The wicked mind is stunned in peril-forms.
When powerful men take great decisions clean,
Their strong heart is, then, seen to be serene. 19.

दुःखाऽनुभूति-परिपक्व-मनोदशानां,
शून्याऽनुभाव-परियापित-दुर्दिनानाम् ।
स्वच्छन्द-विक्रम-कलामिव वारयन्ती
चिन्ता निगूढ-महसां रसमातनोति ।।20।।

दुःखानुभूति-परिपाक-निधापकों के,
शून्यानुभाव-धर दुर्दिन-यापकों के ।
स्वच्छन्द-विक्रम-कला-बल रोकती सी
चिन्ता गभीर मन में रस घोलती है ।।20।।

When human minds are made mature by grief,
Men, passing pains, with patience, find relief.
As if to bar their valour, cares repose,
With secret lights, the mental vigour grows. 20.

उपकारोऽपि कष्टद:

सन्तो यदप्रतिहत-प्रतिभा-प्रसादा
    नाऽन्यत्कृते कलह-कानन‌माविशन्ति ।
तत्कारणं कलियुगे कटुकानुभूति -
    स्त्रातोऽपि दंक्ष्यति न तानिति निश्चय: क:? ।।21।।

सद्वीर ना कलह में पड़ते किसी की,
    सीधा निमित्त कडवी अनुभूतियाँ है ।
सत्साहसी मरण से जिनको बचा दें
    वे ही उन्हें न डस लें यह क्या भरोसा? ।।21।।

If some good men, invincible and bold,
Remain, in others' strives, impartial, cold,
Its cause must be some past example bad,
What guarantee, saved men won't strike their head ? 21.

नीति-वध्वोः समानता

नीतिग्रहाय तरुणेषु निरादरो यः
पाणिग्रहाय स कुमार-निषेध-कल्पः ।
जीवज्जनाऽऽगत-विपत्ति-विशेष-काले
नीतिर्वधूरिव करोति पदं विवाहे ।।22।।

नीतिस्थता-प्रति युवा नर की अवज्ञा
उद्वाह के प्रति कुमार-निषेध-सी है ।
तो भी कर-ग्रहण-काल-बँधी वधू सी
आपत्ति के समय नीति गृहीत होती ।।22।।

A young man's hate to policies, in life
Is like his first refusal to take wife.
Still, in one's youth, one has to take one's bride.
In pains, one does make policies one's guide. 22.

शिशोर्मे शृणु कौतुकम्

बालो मम प्रियतमाऽङ्कगतो ललाटा-

त्सौभाग्य-बिन्दुमुपलभ्य जहौ विलापम् ।

शृङ्गारवस्तु यदनङ्ग-सुखाय पत्यु-

स्तन्मोददाय कुतुकाय सुतस्य जातम् ।।23।।

माथे उछाल भर बालक ने छुड़ा ली

माँ की सुहाग-बिंदिया, चुप हो गया, लो ।

प्राणेश को मदन का सुख दे चले जो

शृङ्गार-वस्तु सुत को, बस, खेल हो ली ।।23।।

My son snatched, from the fore-head of my wife,

Her bindiyā soon after yells and strife.

What makes the husband loving, sportive, gay,

Is to the son a thing of senseless play. 23.

शिष्यायै मम सान्त्वना

जातं तपस्विनि! यदि स्खलनं सुवृत्ते
तस्माद्विचिन्त्यमिति नोऽस्तमितं समस्तम् ।
विस्मृत्य भूतमनुतिष्ठतु सच्चरित्रं
सौम्ये! तथा न भवती भवतून्मनस्का ।।24।।

थोड़ा चरित्र यदि दूषित हो गया तो
सोचो नहीं अब सभी कुछ खो गया है ।
बीती भुला, निज सुवृत्त रखो सँभाले,
सौम्ये! सुनो, न इतना मन हार बैठो ।।24।।

If you have, sometime, lost your character,
O ! pious girl ! let not your heart so stir.
Forget the past and stick to chastity.
Don't get disturbed and do not lose your glee. 24.

तत्र सूक्ति-पयोऽमृतम्

सान्त्वना प्रतिभाजुषे

आपत्तावानुकूल्यं न भजति यदि वा शत्रु-वृत्तिं विधत्ते
सम्पन्नः साधुलोकस्तदिह न हि मुधा हन्त! चिन्ता विधेया ।
सम्पत्तावेष एव त्वदनुगुण-गतिर्यास्यति प्रह्वभावं
घर्मे चाऽऽदानकाले प्रचलति नियतं नैकधर्मः समीरः ।।25।।

प्राणी जो सङ्कटों में सहचर न बनें, शत्रुता साधते हों,
ऐसे सत्ता-कुलों की, धनि-दल-बल की व्यर्थ चिन्ता न पालो ।
सौभाग्यों की दशा में अनुगुण-गति से नम्र हो जायँगे वे
ताते सीरे दिनों में न पवन चलता एकसा, देखते हो ॥25॥

Do not get anxious, friend ! in adverse days,
If people, grow rough, dim their friendly rays.
Your virtue, wealth will bring them to your feet :
The same wind does not blow, in cold and heat. 25

कश्चिद्वाणीविलासं रचयति पुरतः कोऽप्युदासीन आस्ते
कश्चित्कामं निपीयाऽप्यनधिगत-रसो योषितां मध्य-शोभी ।
पुंसां प्रज्ञाऽनुसारं विविध-विधि-जुषां स्वर्ग-सोपान-कल्पो
लीलाऽऽलोकोऽपि रम्यो भवति मृगदृशां किं पुनः किञ्चिदन्यत् ॥26॥

कोई वाणी-विलासी रच-पच बनता है, उदासीन कोई,
कोई पर्याप्त वीक्षा कर तरस रहा बीच बैठा स्त्रियों के ।
लोगों को सुन्दरी की ललित झलक भी स्वर्ग-सोपान सी है
होता होगा न जाने इतर कुछ कही रम्य कैसा नरी का ॥26॥

Some grow more talkative, some stupefied,
Some, watching freely, look not satisfied.
Men relish girls, with various mental swings.
Whose looks so sweet! how charming other things ?26.

त्याग-वृत्तेर्महत्त्वम्

वित्तं मित्रं कलत्रं सुख-करण-दलं नश्वरं नोऽभविष्य-
ल्लोके चेत्कः कृती तत्परिवृति-विरहस्याऽपि नामाऽग्रहीष्यत्?
सौख्यं यन्नास्ति नित्यं तदिह मतिमतां नम्र-भावं विधत्ते
भोगानां चञ्चलत्वं प्रथयति जगति त्यागवृत्तेर्महत्त्वम् ॥27॥

पैसा, योषा, हितैषी, सुखद विषय जो नष्ट-होता, न होता
तो क्या कोई तपस्वी उस परिवृति की यों तितिक्षा सँजोता?
सैख्यो की भाव्यसत्ता मति-युत जन को नम्र हेना सिखाती,
भोगों की नाशवत्ता, विरति-रसिक की भी महत्ता दिखाती ॥27॥

If wealth, wife, friends, had not been transient scenes,
Who would think of resigning pleasure-means ?
The fleeting joys do make the wise polite,
The passing pleasures prove resigning right. 27.

निर्धनानां विमूढता

कुर्वाणो दुष्कृतीनां कुटिल-कृति-कथा मोदते मूढलोको
नाऽऽपत्तीनामुपायं समुचित-समये चिन्तयत्यात्म-संस्थः।
शक्तान् दुष्टान् विनिन्दन्विविध-वचनकैर्दुर्भगोऽयं जनो हा!
प्राप्स्यत्येवं विलापैर्निज-समय-हरैः संसृतौ कां प्रतिष्ठाम्? ॥28॥

देखो तो मूढ कैसे, कुटिल कुकृति की ही कथा में गुथे हैं,
कष्टों के नाश का ना करण समय से सोचते स्वस्थ हो के।
निन्दा दुर्भाग्य-शाली बहु-विध करते शक्ति-शाली खलों की,
पा लेंगे क्या प्रतिष्ठा, कुढ़ कड़क दिखा, झींकने में, गलों की? ॥28॥

See fools, relating tales of evil men;
To pound their pains, in time, they draw no plan.
Abusing bandits bold, in wailing tones,
What good would they avail of fruitless moans?28.

नूत्नानां रावणानां रहसि सहचरः कालनेमिः कलेर्वा
साक्षादात्म-स्थितानां प्रभुरिव, परमात्मा दुरात्मावलेर्वा ।
युक्त्या धर्म-प्रहारी जयति जनमहो! हन्त! रुद्राक्ष-धारी
भास्वद्भव्याऽऽश्रमान्तर्वसति हनुमतां मोहनोपायकारी ॥29॥

ये देखो कालनेमी, सहचर, दुबके हैं, नये रावणों के,
साक्षात् आत्म-स्थितों के प्रभु-सम, परमात्मा दुरात्मा जनों के।
बातों से धर्म-हारी, जन-मति करते भ्रष्ट, रुद्राक्ष-धारी,
छूटे वातात्मजों को विचलित करने, आश्रमान्तर्विहारी ॥29॥

Just see the new Rāvaṇas secret friend,
Kāl'nam', the god of saints and bandits` band,
Not losing slyly dharm'-attacking-chance,
Set in grand shrines, to bluff the Hanumāns.29.

परस्त्री-वीक्षणे भयम्

सौन्दर्याऽधिष्ठितानां चतुर-विलसनाऽऽमन्त्रणे चाऽपि धीरो
दाक्षिण्येनाऽन्यपत्नी-परिहरण-कला-कोविदो ब्रह्म-चारी ।
नारीणां नैव रूपं कुतुक-परवशोऽप्यारभेताऽनुमातुं
साधारण्योऽपि भान्ति प्रचुर-परिचयादप्सरो-लोक-जाताः ॥30॥

भोगों के वे बुलावे विचलित करते सुन्दरी के जिसे ना,
जो वाणी-शिष्टता से बच निकल सके दूसरे की स्त्रियों से।
ऐसा भी ब्रह्मचारी न युवति-जन के रूप की थाप नापे,
मध्या भी घूरने से सुललित लगती अप्सरा की लली सी ॥30॥

One, turning down the handsome ladies' calls,
Avoiding kindly married women's malls,
Should never try to fathom beanty's self.
The gazing makes the simple lady elf. 30.

भाषन्ते के समाने ननु विषम इमे कामिनी-काञ्चने ? सा
नारी रम्याऽनुभावा नर-वश-करणी योजना काऽपि धातुः ।
आलापैर्वा कटाक्षैरपि पुरुषवरः पाद-पाताऽऽतुरः स्या-
न्निर्जीवं काञ्चनं तत्कियदपि सुखदं चुम्ब्यते नो नरीव ॥31॥

झूठे वे जो बताते सदृश-बल यहाँ कामिनी-काञ्चनों को,
ब्रह्मा की, कामिनी तो, नर-वश करने की कला-योजना है।
बैना-नैना-किनारे नर, पद पड़ने की त्वरा सी जताता,
होता सोना, भले ही, सुखकर, रमणी-तुल्य चूमा न जाता ॥31॥

Who calls here equal, lustful maids and gold ?
To make men nervous, God made Woman-mould.
Men yield to ladies` calls and glancing curls
Gold, though dear, can't be kissed by men like girls. 31.

वासना-शासनं भुवि

दृष्ट्वा सृष्टिं विधातुर्भवति मम मनः सर्वदाऽऽश्चर्यमग्नं
नारी-रूपाऽऽसवोऽयं कथममित-मतिञ्चापि मत्तं विधत्ते ।
पश्यन्नारी-नराणां रमण-सुख-समाकर्षणं चिन्तयेऽहं
कस्यां को रन्तुमिच्छेद्यदि भुवि न भवेद्वासनाया निवासः ।।32।।

ब्रह्मा की सृष्टि-वीक्षा कर चकित बना चित्त है मित्र! मेरा
नारी-रूपासवों ने अमित सुमति को भी मदों बीच घेरा ।
कामी की कामिनी में अभिरुचि मुझको सोचने को सँजोती
कोई भी क्यों किसी में रुचि कर रमता, वासना जो न होती? ।।32।।

I'm stunned to see this God`s creation, mate !
How Woman`s beauty maddens men so great !
I think observing people loving here.
Who would love whom if Wish had not been there. 32.

धैर्य-ध्वंस-ध्वनिः सताम्

दृष्ट्वा धर्मात्मनोऽहं धन-सुख-रहितान्दुर्जनोत्सेकदष्टा-
न्दुष्टप्रज्ञानभीष्टं धनमपहरतो निर्भयं भोग-जुष्टान् ।
सद्वृत्तं छद्म सर्वं व्यथित-मतिरिमां घोषणां कर्तुमीहे
बाधा-रूपेण मार्गे पतति परमसौ पण्डितानां विरोधः ॥33॥

धर्मी को देखता हूँ, धन-बिन, खल के गर्व की मार खाते
दुष्टों को देखता हूँ, धन हड़प, उसे भोगते नित्य जाते।
धोखा सद्वृत्त सारा, जब यह कहना चाहता क्रुद्ध-चेता,
तो ऐसी घोषणा से बुध-जन-मत ही है मुझे रोक देता ॥33॥

I see the *pious, wealthless, pained by rogues,*
And villains, looting wealth in various vogues,
I would fain hold that goodness is a guile,
But scholars` strong dissents do check my bile. 33.

अन्येषां कामिनीभिर्गमनमनुचितं मन्यते साधु-भक्तः
को दोषो मित्र! तत्र प्रतिवदति तथा यो दुराचार-रक्तः ।
सर्वेषां सूचनार्थं स्वमतमिह ममाऽप्यस्ति शास्त्रानुकूलं
निस्तेजस्त्वं जनस्य व्यभिचरणवशाज्जायते दैन्यमूलम् ।।34।।

अन्यों की कामिनी के सँग गमन बुरा, है बताते विरागी,
क्या है यारो बुराई यह वह कहता जो दुराचार-रागी ।
लोगों को दे रहा हूँ अभिमत अपना और शास्त्रावली का,
हो जाता तेज फीका, व्यभिचरण पड़े व्यक्ति का दैन्य जी का ।।34।।

Good men advise to leave illicit love
But lustful fools refute the prudent move.
I give my plain view in the present case :
Debauchery gives rise to dire disgrace. 34

कुमार्यो न स्मिताः कथम्?

या वा काश्चिद्युवत्यः पर-पुरुष-मुखं सस्मितं लक्षयित्वा
नौत्सुक्यं दर्शयन्ते सकृदपि तरलास्तन्निमित्तं गभीरम् ।
ताभिर्निर्धारितं स्यान्निखिलमपि जगद्धृष्टमेतन्नराणां
भोगेच्छां पूरयित्वा व्रजति निज-पथा तत्सतीत्वं विनाश्य ॥35॥

मुस्काता देखती भी युवति परनरों को, न जो.मुस्करातीं,
लोगों को देख, ना जो तरल तनिक भी चाव के भाव लाती ।
वे ऐसा मान बैठीं, निखिल नर निरी धृष्टता से भरे हैं,
नारी की लूट लज्जा, कर पथ सज्जा, पार जाते परे है ॥35॥

If girls make no response to smiling males,
Grow not inclined, some deep cause, there prevails.
They must have thought all male community
Is out to hurting female chastity. 35.

शाप-कल्पा रुषा सताम्

ये वाञ्छन्त्यात्मभूतिं सुचिरमभिजनास्तानहं वक्तुकामो
यत्तैरालोच्य कार्यः सकल-परिजने स्वाधिकार-प्रयोगः ।
अन्तस्तप्ता नियोगं निभृतमनुचितं पालयन्तोऽपि तेषां
सन्तः सख्यं न दध्युर्यदि मनसि रुषा शापकल्पं तदेव ॥36॥

श्रीमत्ता चाहते जो प्रभुजन, अपनी ओर वे नैक झाँकें,
ऊर्जा आँके बिना वे, सब परिजन को, एक लाठी न हाँकें ।
स्वामी के, जो सदात्मा, चुप, अनुचित आदेश को भी गहेगा,
स्वात्मा में रुष्ट होता, वह मन-कुढ़ना शाप होके रहेगा ॥36॥

I warn administrators for their good,
To all they should not keep alike bad mood.
If calm great souls obey their orders wrong,
It is like a bane, for the rulers, strong. 36.

कोऽयं वाग्मी सभायामधिगत-विजयो योऽनुपात्ताऽनुभूतिः ?
कोऽयं काव्यप्रणेता कवयति सरसं लोकदृष्टिं विनैव ?
कोऽयं शास्ता समन्तात्समुपचित-नयो योऽनधीत-स्वभावः ?
व्यक्तित्वं मानवानां विकसति विविध-प्राणि-सम्पर्कमेत्य ।।37।।

ऐसा वक्ता बता दो अनुभव-बल से हीन होकर उठा जो!
काव्यों का कौन कर्ता, सरस कवि बना, लोकवीक्षा बिना ही ?
शास्ता भी कौनसा जो प्रकृति-परख से शून्य नीतिज्ञ नामी ?
व्यक्तित्वों की विधाएँ विकसित बनती, प्राणि सम्पर्क से है ।।37।।

Without gained skill who grew debators bright,
And poets great, without mundane insight ?
Not reading natures, who ruled polity ?
Wide contact shapes Man's personality. 37.

सौख्यं धर्मात्म-शासने

राष्ट्राणां लोकतन्त्री भवतु वरमुताऽलोकतन्त्री प्रशास्ति:
किं वा तद्यन्न भूयात्कलुषित-मनसां साधनं दुष्कृतीनाम् ?
अन्तस्तो नैव यावद्भवति परिचितो शासको धर्म-बुद्ध्या
तावत्सौख्यस्य चर्चा विचलित-भुवने भाष्यमाकाश-पुष्पम् ।।38

राष्ट्रों की लोकतन्त्री प्रचलित अथवा राजतन्त्री प्रथा हो,
कैसी भी हो प्रणाली, कलुषित बनती, दुष्टता साधने को ।
शास्ता के धर्म-सत्ता, जब तक मन में जन्म लेती नही है,
सारी चर्चा सुखों की, तब तक जगती मे निशि कल्पना है ।।38।।

Let there be lords, elected or by birth,
What's that that can't be means of evil mirth ?
Unless Man's heart is ruled by piety plain,
All talk of public welfare will prove vain. 38.

दुर्दैवाद्दुर्जनानां वशमधिपतिता वस्तुतः सज्जना ये
तैर्धैर्य-स्वानुभूत्या निवसनमुचितं मौनमालम्बमानैः ।
सौभाग्यं नोऽप्युदेष्यत्युरसि बहुविधं धारयित्वा तथाऽऽशां
नोदेत्येतत्कदाचित्तदपि च करण-क्षोभ-वेलाऽनपेक्षैः ।।39।।

दुर्भाग्यों से बुरों के विवश वश पड़े जो भले है बिचारे,
मौनी हो वे बितायें, निज दिवस बुरे, धीरता के सहारे ।
आयेंगे भी हमारे दिन यह मन में धार, जो आ न पायें
तो भी चिन्ता न अन्तःकरणगत किसी क्षोभ की चित्त लायें ।।39।।

The rogues` subordinates, by symptoms great,
Should have discretion, patience, faith, in fate.
If, for some reason, luck does not turn kind,
They should control the tide of troubled mind. 39.

भण्डासुर-विनिग्रहः

भण्डेभ्यो दण्ड-दाता जयतु भगवती-दण्डनाथा-प्रकोपो
मुञ्चन्त्येते यतो. नो स्वयमधिकभृताँल्लोभ-मात्सर्य-कामान् ।
सौभाग्यं स्वस्थवृत्तिं जनयितुमनिशं सुन्दरी साधनीया
जायन्ते मन्त्र-शक्त्या सुकलित-करणाः प्राणिनः प्राणवन्तः ॥40॥

भण्डों का दण्ड-दाता, प्रबल भगवती-दण्डिनी-क्रोध जीता,
जो वे लोभादिकों में, अधिक पतित भी, ना लगाते पलीता ।
सौभाग्याऽऽरोग्य देने, भजन कर, सदा, सुन्दरी को मना ले,
हो जाते प्राणवाले, सुकलित-मति के, मन्त्र-विद्या-सँभाले ॥40॥

Let Goddess Daṇḍinī crush evil souls,
As they don't leave their greedy, jealous roles.
To heighten health and luck, love Sundarī,
Her mantras make men live here powerfully. 40.

चारित्रं सत्त्व-सम्भवम्

यावद्रोगाऽभिलाषं न भजति पुरुषः कामिनीनां कटाक्षे
तावन्नारी-शतानां शित-नयन-शतं चापि चित्तं न शास्ति ।
कामानामेष सर्गो दिशति रसिकता-गौरवं तत्सकाशे
चारित्रे हेतुभूता भवति तनुभृतां सात्त्विकी वृत्तिरेव ॥41॥

गोरी की आँख कारी जब तक पुरुषों में समाती नहीं है,
नारी-शोभा कटीली, तब तक उनको जीत पाती नहीं है।
चाहों की सृष्टि आती उभर, रसिकता, संगमों में, बढ़ाती,
चारित्रों की विधा में, रुचिकर मन की वृत्ति ही काम आती ॥41॥

Unless, girls` graceful glance, men entertain,
The sharpest looks of ladies lie in vain.
It is amours that heighten indulgence:
The characters depend on mental lens. 41.

धूर्तानां लक्षणं परम्

सत्त्वं यन्नास्ति सत्त्वे तदपि निजगतं कीर्त्यते कीर्त्तिकामै-
वार्चालत्व-प्रसक्तैर्विवरण-विकलैर्वल्गितात्माऽभिरामैः ।
का का सा हन्त! सत्ता न भवति विषयो या हि दम्भोम्भितानां
धूर्तानां धूर्तताया न भवति परिधिर्धृष्टता-धर्षितानाम् ॥42॥

जो सत्ता है नहीं भी निजगत, अपने में उसे भी बताते,
स्वात्मा के गौरवों का विवरण करते जो कभी ना अघाते ।
अच्छाई कौन सी जो न विदित उनके दम्भ का खम्भ होती ?
धूर्तो की धूर्तता की अमित परिधि का, धृष्टता, गर्व धोती ॥42॥

Pretending virtue that they don't possess,
with boasting words, their false form, they express.
what goodness is not made there ego's brood ?
Impostors those are cured by rascals rude. 42.

वैराग्यं मे सुखेष्वपि

सप्तैते मन्त्रपूता द्विज-विधि-परिणीता-प्रसूताः सुता मे
जाया धान्यं धनानि प्रमुदितवदनं निष्कलङ्कं कुटुम्बम् ।
सन्तोषो धैर्यमाशाऽप्रतिहतकविता सुन्दरीणां सपर्या
वैराग्यं मे तथापि प्रचित-सुखमनादृत्य चित्ते चकास्ति ।।43।।

मन्त्री हैं सात बेटे, द्विज-विधि-परिणीता-वधू के सदङ्की,
जाया, धान्यों, धनों से धृत-सुख-मुख है, वंश है निष्कलङ्की ।
धैर्याऽऽशा, तोष भी है अविरत कविता, सुन्दरी के निहोरे,
तो भी वैराग्य मेरे मुदित हृदय में ले रहा है हिलोरे ।।43।।

I, ve seven mystic sons, from Brāhmaṇ' wife,
With whom I lead a happy, cheerful life.
I,ve pure race, pleasure, poetry, Çrī-grace,
Indiff 'rence to the world, I, still, embrace, 43.

दुर्वासोव्यासमुख्याः कर-परशु-धरा जामदग्न्याश्च रामाः
पापिष्ठानां पुरस्तान्निज-विमलवपुर्दर्शनोत्काः कथं स्यु : ?
कल्पान्त-स्थायिनस्ते कथमिह कुधियां वृत्तिभिः स्युः प्रसन्ना
वृद्धानां सज्जनानामपि युवक-सुतैर्यत्र नो बुद्धि-साम्यम् ? ॥44

दुर्वासा-व्यास जैसे, कर-परशु-धरे राम जैसे तपस्वी,
पापिष्ठों से, चला के, हिल-मिल घुलते क्यों रहें वे मनस्वी
कल्पों की आयु के वे, पतित मनुज से क्यों रखें प्रीति-ना
बुड्ढे सन्मानवों से जब सुत उनके ही नहीं मेल खाते? ॥

Why should Durvāsā, Vyās', Paraçu-Ram'
Appear to see the men of sin and sham ?
How could the world-old saints hail evil souls
That hate their good old parents` pious goals?4

दृष्टा सा बाण-सृष्टा धृत-सुरभि-जटा पुण्डरीकान्तरेष्टा
दृष्टा सा कण्व-शिष्टा नरपति-निहतेष्टा ततो नष्ट-रिष्टा ।
दृष्टा सा वत्सराजे विभव-शबलता सुन्दरी-मन्त्र-दिष्टा
दृष्टाऽनिष्टेष्टतानामनुभव-जनिता दृष्टिरेवाऽवशिष्टा ॥45॥

देखी है बाण-सृष्टा धृत-सुरभि-जटा पुण्डरीकान्तरेष्टा
देखी है कण्व-शिष्टा नरपति-निहतेष्टा तथा नष्ट-रिष्टा ।
देखी है भव्य शोभा उदयन नृप की सुन्दरी-मन्त्र-दिष्टा
देखे, चाहे, न चाहे अनुभव-दल की दृष्टि ही आज शिष्टा ॥45॥

We saw of Bāṇa's Puṇḍarīka's love.
We saw, through banes and boons, Çakunt'lā`s move.
We saw Vats' -Rāja's mystic, glorious gains.
A thought of adverse and good scenes remains ! 45.

जाति-धर्मौ तु जन्मतः

यो यस्यां जन्म लेभे भवति जगति साऽऽजीवनं तस्य जाति-
यों यस्मिञ्जन्मजातः स भवति वयसाऽऽजीवनं तस्य धर्मः ।
नित्यौ त्यक्तुं न शक्यौ कथमपि मनुजैः स्वेच्छया जाति-धर्मौ
सिद्धान्तः शाश्वतोऽयं मुनि-जन-महितो वर्ण-धर्मि-प्रजानाम् ।।46।।

जो जैसे जन्म लेता मृति तक उसकी जाति होती वही है ।
धर्मी की जन्म से ही मरण तक वही धर्म-सत्ता रही है ।
स्वेच्छा से जाति-धर्मान्तर-अनुमतियाँ, आप्त-नेता न देता,
शास्त्रो के संघ भी है मुनि-मत इस सिद्धान्त के ही प्रणेता ।।46।।

Where one is born, that is one`s life-long caste
And faiths, divine, of people, life-long, last.
Man's caste and creed are ever-constant facts.
It is the sage-held rule of Hindu sects. 46.

सूक्ति-दध्यमृतं ततः

परामर्शो ममादिमः -

लज्जां मुञ्च, कुरु प्रपञ्चमचलं चाटूक्तियुक्तः सदा
सर्वत्र प्रसरं विधेहि महतां मानं मुदा मर्दयन् ।
दैन्यं दर्शय कुत्रचित्क्वचिदहङ्कारं धनोपार्जने
स्वार्थं साधय सर्वथाऽखिलजगद्भ्राष्ट्रे वरं भृज्ज्यताम् ॥47॥

लज्जा छोड़, करो प्रपंच, सबकी ही चापलूसी करो,
यों सर्वत्र घुसो, गभीर-गुरुता मानी जनों की हरो।
पैरों में पड़ लो कहीं, धन कहीं पर ऐंठ लो, ऐंठ के,
कोई भाड़ पड़े, अभीष्ट अपना साधो, गला मेंठ के ॥47॥

Do fraud, grow shameless, first-rate flatterer,
Insulting greatmen, enter ev'rywhere.
Show poverty or pride, at times, for wealth.
Let all men die, secure your ends and health. 47.

रे! रे! जातक! मद्वचः शृणु, सखे! सन्तापितः सङ्कटैः
कातर्येण समुच्छ्वसन्न कुरु तां वैराग्यबुद्धिं वृथा।
सद्वर्गेषु निवेदयन्व्रज निजं कामं प्रकामं यतः
को जानाति तवेप्सितार्थ-फलदो वीरः कुतो राजते? ॥48॥

ओ! रे! सङ्कट से घिरे सुन, सखे! मेरी वचो-धावना,
लम्बे साँस भरे, कभी न करना, वैराग्य की भावना।
अच्छों के दल से, किये चल, सदा, स्वच्छन्द तू प्रार्थना,
ना जाने, कब, कौन वीर कर दे पूरी मनःकामना ? ॥48॥

Tormented by ill fate, just heed me, friend !
Leave heaving sighs, with your ascetic trend.
Approach some good men and tell them your stand.
Who knows who is destined to take your hand ?48.

मुक्त्वाऽऽलस्यमुपार्ज वित्तमजरा नेयं तनू-देवता
शैथिल्यस्य दिनान्यपीह सुमते! नन्वागमिष्यन्ति ते ।
धर्मेणैव धनाऽर्जनं कुरु परं यद्यर्थितं मङ्गलं
धर्मात्मत्वमृते नृजन्म विफलं वित्ताऽधिपानामपि ।।49।।

सुस्ती छोड़, हिरण्य जोड़, तनु की ऊर्जा, टिके ना सभी,
आयेंगे दिन देह की शिथिलता के भी कभी ना कभी ।
जो तू मङ्गल चाहता, धन कमा ले, धर्म से सर्वथा,
धर्मात्मत्व विना नृजन्म बनता वित्तेश का भी वृथा ।।49।।

Leave sloth, earn wealth, you won't be ever young :
Your strength is bound to be, by old age, stung.
But riches should be gained with righteousness.
Rich men are vain if turned religion-less. 49.

धर्माचार-पुरस्सरं कुरु सखे! द्रव्याऽर्जनं यौवने
तन्मार्गेषु पदे पदे समुदिता बाधाः समुत्सादयन् ।
सामर्थ्याऽवसरे सुखाय सदनं नाऽऽसादितं चेत्तदा
पश्चात्तापमृते भविष्यति तवाऽन्यत्किंविधाऽऽख्यानकम् ? ।।50।।

ज्वानी में धन जोड़ता चल, भला, हे मित्र! तू धर्म से,
विघ्नों को, धन-मार्ग के, कुचलता जाता सदा कर्म से ।
जो तू धाम बना सका न अपना, सामर्थ्य की धार में,
पश्चात्ताप बिसार सार तुझको क्या और संसार मे ? ।।50।।

Grow rich through rightousness while your youth reigns,
Removing strains of earning means and gains.
In powerful days, if you can't have a home,
To what else but repentence would you come ? 50.

आपत्तौ महतां नयः

सामर्षैरपि सस्मितैः स्व-विपदा-व्यापादनोद्दीपितै -
मन्दानां मतिमद्भिरप्यविकलं कर्तव्यबोधोद्यतैः ।
यद्दुर्दैव-दिनेषु खिन्न-मनसा सेवा समाराध्यते
नीति-प्राप्तमनीप्सितं हि महतां तत्साधनं सङ्कटे ॥51॥

बन्धोन्मूलन का विचार रखता, सामर्ष मुस्कान में,
मन्दों की, मतियुक्त भी, समय के कर्तव्य के भान में ।
सेवा जो मन मार के कर रहा, व्यापत्ति-आसत्ति में,
ना चाही वह नीति है यत महात्मा की महापत्ति मे ॥51॥

If great men, angry, smiling serve the fools,
Intent on freedom, cling to service rules,
Endure insult, caught by adversity,
It is their hated, casual policy. 51.

यस्यां कल्प-सहस्त्रमायुरथवा ज्ञानं न सम्भाव्यते
भृत्यानां विनयार्जवादि गुणिनामप्यन्यथा श्राव्यते ।
साशङ्कैरनुजीविभिश्च नियतं या दुःखमाराध्यते
सेवा नाम निवृत्त-सत्त्व-गरिमा वृत्तिर्निकारो महान् ॥52॥

ज्ञानी की, गुरु की न पूछ जिसमें ऐसी बुरी नौकरी,
भृत्यों के विनयार्जवादि गुण भी दीखें जहाँ दोष ही ।
भैमी से, भयभीत से, भटकते से भृत्य भेटें जहाँ
सेवा सत्त्व-महत्त्व-वञ्चन-करी भारी तिरस्कार है ॥52॥

Where boundless age or knowledge, not esteemed,
Decorum, frankness are, as vices, deemed,
Where men, their lives, with fear, anxiety, lead,
The service is a great insult, indeed. 52.

यस्याश्चेतसि राग-बीजमनिशं जागर्ति जीमूत! रे!
कामोद्दीपन-कारक-प्रकरणं तामेव सन्तापयेत् ।
हा! जीवत्पतिकाऽस्मि मुक्त-पतिका! धिक्तं च तच्चिन्तनं
स्वच्छन्दं स्वन गर्ज तजय मया भस्मीकृता वासना ॥53॥

रे! मेघा! जिस अङ्गना-हृदय में रागांश भाते रहें,
कामोद्दीपन के प्रसङ्ग उसको आते, सताते रहें।
जीते जी पति छोड़ मै रह रही, धिक्! क्या इसे सोचना?
कैसे भी अब गर्ज, भस्म कर दी मैं सभी वासना ॥53॥

The sense of sex perplexes those young girls
Whose hearts are swayed by Cupid`s craving curls.
I left my husband ! Why to scratch that soar ?
I've burnt all passions, Cloud ! do freely roar. 53.

दुर्भाग्य-भ्रान्त-मानवः

शक्तिर्नास्ति धनार्जने प्रकुरुते त्यागस्य दिग्दर्शनं
यः सन्ताप-समन्वितो न च करोत्यापत्ति-नीत्यां मतिम् ।
तस्मै किविधमादिशेत्सुखकरं मार्ग सुधीरः सुधी -
र्यावद्बुद्धिमसौ स्वयं न लभते विज्ञाय वस्तु-स्थितिमू ? ॥54॥

संपत्सञ्चय की न शक्ति, जँच के त्यागी बना घूमता,
दु:खी होकर भी न घोर-विपदा की नीति को चूमता ।
ऐसे को सुख-मार्ग-दर्शन सुधी कैसे करे तान के
जो सद्बुद्धि इसे स्वयं न मिलती, सच्ची दशा जान के? ॥54॥

A man earns nil, displaying hermits` glee,
Perplexed, yet hates the crisis-policy.
What ways, could great wise men prescribe for him
unless he deems it fit to check his whim ? 54.

कामना कुत्र मूर्खता

रे! रे! मानुष! मूढ! भोग-लभनोद्यल्लालसा-लुण्ठित:
काभ्यस्त्वं कमनीय-काम-कलना-कुण्ठ: समुत्कण्ठसे?
सम्पत्तिं जनयात्मनि प्रवरता-सम्पादिनीमन्यथा
संसारे हि परिभ्रमन्ति बहवो मुग्धा मुधा त्वादृशा: ॥55॥

रे! रे! मानुष! मूढ! भोग-लभनों की लालसा-लुण्ठ सा,
पाने को किनको रहा तड़पता सोत्कण्ठ सा कुण्ठ सा ?
आत्मा में गुणसम्पदा भर, नहीं तो कामना से बँधे
हैं यों ही फिरते, धरा पर, निरे, तेरे सरीखे गधे ॥55॥

O ! man ! arrested in the sensual phase,
What girls do you pine for and humbly chase ?
Gain virtue, honourably be installed
Or fools, like you, in plenty, roam this world. 55.

सौजन्यं किल कीर्तितं कविवरैर्योषित्कृपा-बाधकं
मन्यन्ते बहु कैतवं मृगदृशस्त्वेतादृशं यन्मतम् ।
तत्सूक्तं सुविचार-शील-महिला-मोहाय शाठ्यं न किं ?
किं वाणी न तथा सृजन्ति कवयः स्त्र्याकर्षणाऽपेक्षणीम् ? ।।56।।

लोगों को मिलती नहीं सुजनता से कामिनी की कृपा,
देती हैं मृगलोचनी कितवता को मान, त्यागे त्रपा ।
क्या ऐसा कहना न शाठ्य, महिला को मोहने के लिये ?
क्या ऐसी कविता न बाट युवती की जोहने के लिये? ॥56॥

Good souls can not win women, poets say,
Girls love impertinence, it is their way.
Is not this strain an insolence to girls ?
Don't poets grow so saucy charming churls ?56.

स्वार्थाऽऽसक्तिरियं परा भगवती लोके समुद्भासते
सत्यं किंचन कर्म नैव विदुषा निःस्वार्थमारभ्यते ।
आनन्दो यदि सङ्गतोऽक्षविषयैर्नैवाऽभविष्यत्तदा
को वा नाम जडोऽकरिष्यदपि तं सन्तानहेतोः श्रमम् ? ॥57॥

स्वार्थासक्ति, भला, भली भगवती संसार में राजती,
कोई काम यहाँ न लोग करते, ज्ञानी, बिना स्वार्थ के ।
भोगों के यदि संग में तनिक भी आनन्द आता न तो
कोई क्यों करता परिश्रम वही सन्तान के भी लिये ? ॥57॥

By selfishness the universe is won
Without self-int'rest, nothing is here done.
If pleasure had not been, with sense, allied,
For mere child birth, what dunce would ride his bride? 57.

सद्ध्यो भिन्नपदं कदापि मनुजो मार्गं समालम्बते
सत्साध्यानि सुसाधयन्नपि कदाऽप्यापादयेद्विक्रियाम् ।
नैराश्यं तनुते पुनर्विजयते वीरेषु वर्यो भवन्
सत्त्वोत्कर्ष-विराजितेषु बहुधा वैचित्र्यमालक्ष्यते ॥58॥

ऐसे भी पथ को कभी पकड़ता जो सज्जनों का नहीं,
साध्यों को सध साधता सुविधि से, व्याघात ला दे कभी ।
हो वीताश कभी, कभी विजय को, सद्वीर हो, चूमता,
सत्त्वोत्कृष्ट मनुष्य में पनपता वैचित्र्य देखा गया ॥58॥

Sometimes, engaged in desecrating deeds,
Set well, at will, cause self-cause-losing leads,
Now hopeless, then brave, they fulfil their ends:
Prodigious persons take eccentric stands. 58.

दर्शं दर्शमनेकधाऽपि तृषितः सम्भाव्य नैजं जनं
सीदन्तं समुपस्थितं सकृदपि द्रष्टुं पुनर्दर्शकम् ।
सद्यःस्तब्ध-कनीनिकोऽवनिगतो नूनं प्रयाण-क्षणे
वाञ्छत्यन्तक-वाञ्छितोऽपि जरठो भूयः स्वदेह-स्थितिम् ॥59॥

वारंवार निहार भी स्वजन को सन्तृप्त ना चित्त में,
चारों ओर विलाप-लीन कुल के आँसू ढले, गाहता ।
आँखों की पुतली लिये ठहरती, पृथ्वी पड़ा अन्त में,
चाहा अन्तक का, सुजीर्ण जन भी, जीना अभी चाहता ॥59॥

With constant looks at kinsfolk, gathered round,
Lamenting with the high pathetic sound,
Just laid on ground, his eye-balls stayed with strife,
The old man still longs for his longer life. 59.

श्री-सम्पूर्ण-सुवर्ण-सत्त्व-ललिता, लावण्यपूर्णानना,
पीनोत्तुङ्गपयोधराधरसुधाधाराधराधामिनी ।
स्त्री-रत्नोत्तम-सङ्गमाऽर्चित-धियं श्री-मन्त्र-तन्त्र-प्रियं
या मां मोदयते मदन्तरगता कस्यैचिदस्यै नमः ॥60॥

श्री-सम्पूर्ण-सुवर्ण-सत्त्व-ललिता, लावण्यपूर्णानना,
पीनोत्तुङ्गपयोधराधरसुधाधाराधराधामिनी ।
स्त्री-रत्नोत्तम-सङ्गमार्चित घने श्री-मन्त्र-तन्त्रों तने
मेरे चित्त चढ़ी किसी युवति को मेरा नमस्कार है ॥60॥

I greet the girl of grace, with lovely face,
With lofty breast and lips of nectar-trace —
The best of maids, set in my mystic heart,
Adored by first-rate ladies, pure and smart.60

वक्षो-नेत्र-नितम्ब-नीत-नयनो नीवी-नताऽक्षः सुहृ -
न्नेकान्ते नव-यौवनाभिरनिशं रम्याः कथा मा कृथाः ।
भोगोत्कण्ठि विलास-वस्तु नवला नारी न जाने कदा
कस्यां कुत्र कथं कुबुद्धि-चलितं माद्येद्धि मुग्धं मनः ॥61॥

नीवी, नेत्र निहारता न बतरा, एकान्त में, तू सखे!
ज्वानी में परदार से महकती सी रम्य बातें कभी ।
भोगोत्कण्ठित, भोगवस्तु, जग में, होतीं नई नारियाँ,
ना जाने किसको लगे मचलने, होके हिया बावला ॥61॥

No discourse, friend, with youthful ladies, lone,
Affecting luring looks and charming tone.
Love-blown, sense-pleasure-prone is womankind.
Who knows where, why, how, who might move your mind ? 61.

ज्योत्स्ना व्याप्य गताऽथ भानुरुदितोऽप्यस्ताचलं प्रस्थितः
किं किं नास्ति जगत्यपार-करुणे वैराग्य-सन्दीपनम् ?
एवं सत्यपि यौवने नृषु मनो-मोदं समाऽऽकारणी
नारी-सुन्दरता हि सा विजयते संसार-संसारणी ॥62॥

ज्योत्स्नाऽनन्तर सूर्य भी उदित होकर अस्त होने चला,
क्या-क्या दृश्य न विश्व में भर रहा वैराग्य की भावना ?
तो भी यौवन में, मनुष्य-मन में, जो मोद लाती रहे,
नारी-सुन्दरता बड़ी बल-वती संसार-संसारणी ॥62॥

The moon-light fades, the bright sun goes to set
Ascetic thoughts, what's that that does not whet
In spite of that, by beauties men are lulled:
'Tis handsome women's grace that wields the world. 62.

विश्रम्भा भुवि शाश्वता न सकलाः केचिद्युगाऽपेक्षया
पर्याप्तं प्रथितास्तथाऽपि गलिताः कालान्तरे कीलिताः ।
अस्मत्काल-विकल्पितं कलियुगे लोके प्रवृत्तं मतं
को जानाति कियद्दिनानि जनता-सम्मान्यतामेष्यति ? ॥63॥

आस्थाएँ न सभी अनन्त, जग में, सत्ता किन्हीं की कभी
कालाऽपेक्षित हो चली, मिट गई, कीली किसी काल में ।
लोगों ने अपना रखी, चलन की, चालू प्रथा, आज जो
ना जाने, कितने दिनों तक, जनों की मान्यता पा सके ? ॥63॥

All trusts are not eternal, some of them
Came out but which then men had to condemn.
So many ways of life men have today.
Who is sure when they will reach their decay?63.

वृथा-वार्ता हि मा कृथाः

जानात्येव निजेप्सितं सफलता-सौख्यं च सर्वो जनः
साफल्यं कथमाप्यमत्र सुजनैः प्रश्नोऽयमेवाखिलः ।
सौभाग्योदय-कारकं यदि किमप्याऽऽवेद्यमेतन्मुदा
वेद्यं तत्क्षणमन्यथा हि मुखरा मौनं भजध्वं बुधाः ॥64॥

स्वार्थो को सब जानते, सफलता का सौख्य भी ज्ञात है,
कैसे सज्जन विश्व में सफल हो, सारी समस्या यही
सौभाग्योदय का उपाय यदि हो तो बोल दो प्रेम से,
ना हो तो फिर व्यर्थ बात तज के, मौनी बनो पण्डितो! ॥64॥

All know their aims and pleasures of success,
The problem is there how to make access.
If you do know some fortune-forming-feats,
Please speak or you had better stop your bleats. 64.

ये चाऽप्यत्र निरन्तरं रसमयीं कुर्वन्ति भोगस्तुतिं
चित्रं ते निज-यौवनेऽपि भवितुं शक्याः पराः संयताः ।
कामं दर्शित-संयमा अपि परे दृष्टा भुजङ्गाः जना
बाह्याचारमवेक्ष्य केवलमहो! कःकं दिशेत्कीदृशम् ? ॥65॥

वाणी से करते सदा रमण के आनन्द की वन्दना
जो, वे यौवन में विचित्र ढँग से देखे बड़े संयमी ।
ऐसे भी कुछ जो प्रदर्शन करें वैराग्य का, जार हो,
बाह्याचार विचार, कौन किसका आचार कैसा कहे? ॥65॥

The men who often praise the joys of sense
Could, strangly, prove, in youth, restrained, intense
While others, chaste outside, are hidden lewd.
Through outward shows, who could be rightly viewed ?65.

असद्भिर्महिमा सताम्

एके सन्ति विदूषका हि महतां वृत्ताऽनुदत्तैः पदै-

राचारं किल नाटयन्ति कृपणाः कीर्त्युत्सुकाः केवलम् ।

सद्व्याहार-विडम्बनादि-विविध-व्यापार-मग्ना मुधा

माहात्म्यं प्रतिपादयन्ति कपटाचारैरसन्तः सताम् ।।66।।

ऐसे भी जन जो महापुरुष के सारे सदाचार का

लीला-नाटक सा किये फिर रहे हैं, नाम के ही लिये।

सद्व्याहार-विडम्बनादि करने में व्यर्थ ही मग्न वे

सन्तों का, खल, सत्त्व सिद्ध करते जाते छलाचार से ।।66।।

The apes of great men play the feigning game.
They take vain strides,aspiring for the fame.
Pretending great men's works and words and gait
Impostors prove the greatness of the great. 66.

माहात्म्यं प्रकृतौ स्थितम्

बाल्यादेव निवारयन्नवरतां साधुः समुज्जृम्भते
नाकाशे समकालमेव तमसा सूर्यस्तनोति प्रभाम् ।
कार्पण्यं प्रतिपालयन्नहि महासत्त्वैः समुद्घूयते
चारित्रेण निसर्गतो हि महतां श्रेण्यो विभक्ता इव ॥67॥

जीता है, बचता हुआ अवरता से, साधु आरम्भ से,
फैलाता नभ में न साथ तम के ही, धूप को, सूर्य भी ।
देते भी न महाबली कृपणता का साथ देखे गये,
होती सिद्ध निसर्ग से अलग सी श्रेणी बडों की यहाँ ॥67॥

The sages rise, bereft of evil ways.
The sun does not, with darkness, dart its rays.
The saints don't roar, supporting stinginess.
Great men are known by Virtue's plain excess. 67.

काचिद्धेनुरियं विचुम्ब्य सलिलं पात्राच्छनैर्दर्शितात्
'हीयो प्वुच्'- परिपूजितैः सुवचनैः सुस्नेह-निस्यन्दिभिः ।
भूयः पार्श्व-विनीत-पुच्छ-वदना किं नाम दंशभ्रमा -
त्प्रातर्गोप-सुरक्षिताऽऽत्म-निलयाद्धीरं वनं गच्छति ।।68।।

देखो तो, मुँह डाल धेनु जल में, आगे रखे पात्र के,
'हीयो प्वुच्'- सम रम्य बोल सुनती, बोले गये स्नेह से।
डाँसों के डर से स्व-पुच्छ-मुख को लेती पुनः पार्श्व में,
प्रातःकाल गुपाल के खिरक से धीरे चली हार को ।।68।।

Just sipping from the water-pot, nigh-brought,
With the words 'Hīyo puc', affection-wrought,
With mouth and tail, for gnats, attempting blows,
Some cow, at morn, to meadows, calmly, goes.68.

वरे शापे यतो भव

त्यक्त्वा शाप-वर-प्रयोगमट रे! प्रायस्तपस्विन्! सखे!
नाऽत्यन्तं भुवि वर्तते किमपि ते कोप-प्रसादास्पदम् ।
शत्रुत्वं नहि नित्यमस्ति परमो वैरी हितैषी भवे -
न्मित्रं चापि भवेदरि: किमथवा हेतूद्भवा भावना ॥69॥

शापों की, वरदान की प्रकृति को, प्राय:, सखे! छोड़ तू,
तेरा क्रोध-प्रसाद-पात्र, जग में, है नित्य कोई नहीं ।
देखी शाश्वत शत्रुता न, बनता वैरी हितैषी कभी,
होता कारण-जात भाव जन में, हाँ, मित्र वैरी बने ॥69॥

O! mystic friend ! refrain from banes or boons.
Avoid your constant rage or pleasure-tunes.
One's foes and friends are never absolute.
Foes turn friends: spirits, reasons execute. 69.

गेह-शोभा पतिव्रता

विद्या-वित्त-विवर्जिता अपि नरा नार्यो न साधारणा -

स्तत्र श्रीशिव-शक्ति-भक्ति-तपसां तेजो विराजेत चेत् ।

कार्याऽकार्य-विचारणा-परतया तापेऽपि सन्तोषिणां

पातिव्रत्य-परायणा हि रमणी गेहे सतां शोभते ।।70।।

विद्या-वित्त-विहीन भी नर-नरी को तुच्छ ना मान लो

जो होवे शिव-शक्ति-भक्ति-तप की तेजस्विता की छटा ।

कार्याऽकार्य-विवेक-जन्य-विपदा-सन्ताप भी झेलता

सन्तोषी नर धन्य, गेह जिसके नारी धवाऽऽराधिका ।।70।।

Do not deem loreless, wealthless persons vain,

Provided Çiv' and Çakti drive their brain.

The pious life, though poor, is not a waste.

The men are fortunate whose wives are chaste.7

सिद्धि:स्वात्म-तपो-भवा

दारिद्र्यं न कदापि सज्जन-तप:संवर्धने बाधते
दुष्टानां न तथाविधं धनबलैर्व्यक्तित्वमुत्पद्यते ।
श्रीविद्याऽऽदिक-देवता-जप-मनूनद्यापि नित्यं जपन्
सिद्धिं साधक आत्मजां हि लभते, वाणी प्रमाणं मम ॥71॥

ना व्याघात दरिद्रता, सुजन को, होती तपोवृद्धि में,
पैसे से बनता नहीं कुजन का व्यक्तित्व वैसा यहाँ ।
श्रीविद्यादिक मन्त्र के जप किये से आज भी लोक में
पाता साधक सिद्धि आत्मबल से, साक्षी बना मै खड़ा ॥71॥

Here penance couldn't be checked by poverty.
Wealth couldn't shape so bad men;'s pers:nality.
With Çrī-Vidyādik'-mantras, e'en today,
Adepts secure success from self, I say. 71.

कीर्त्यन्ते कलुषात्मनां कृतिकथास्तीर्थेषु तीर्थारिभिः
श्रूयन्ते हि कुतर्क-कर्कश-गिरो वाग्देवता-द्वेषिणाम् ।
दृश्यन्ते दुरितात्मनां दलदला आन्दोलनाऽऽन्दोलिता
दुर्गे! दुःखद-दुष्ट-दर्प-दलनी शक्तिः सतां सूयताम् ॥72॥

तीर्थों में खल-वृन्द की कृति-कथा तीर्थाऽरि हैं बाँचते,
वाणी-शत्रु कुतर्क-कर्कश-गिरा उच्चारते ठाठ से ।
पापी लोग उभाड़ते फिर रहे आन्दोलनों के लिये,
दुर्गे! दुःखद-दुष्ट-दर्प-दलने की शक्ति दो साधु को ॥72॥

At shrines, rogues tell the sinners` tales absurd.
Wrong pleas of pseudo-scholars there are heard.
The gangs of bandits raise insurgent waves.
Durgā! please make saints pound the pride of knaves. 72

कं पृष्ट्वा पातकं कृतम् ?

आधि-व्याधि-विमर्दिता विचलिता दुर्भाग्य-दग्धा जनाः
क्रोधाऽऽवेश-निवेशितैर्निगदनैर्निन्दन्ति नारायणम् ।
कष्टेऽनर्गलभाषकान्प्रकुपितान्प्रष्टुं प्रवृत्तोऽस्म्यहं
पृष्ट्वा किं परमेश्वरं कृतमिदं व्याघातकं पातकम् ? ॥73॥

दुःखों से उद्विग्न लोग अपने दुर्भाग्य से दग्ध हो,
क्रोधावेश-निवेश से उकसते विश्वेश को कोसते ।
कष्टों में गल फाड़ते उन जनों से पूछने मैं चला-
पूछा था प्रभु से, स्वपाप करने को, आपने क्या कभी? ॥73॥

The men, tired of ill fates, diseases dire,
Abusing God, against Him, raise their ire.
I ask the reckless, reinless raillers, pinned
If they had leave of God, before they sinned. 73.

चण्डीं भजत, पण्डिताः!

युद्धं धर्म-विरुद्धमिद्धमधुना धर्म-द्विषां सज्जनैः
सर्वं शासन-सम्मतं चलति तज्जाति-प्रथोन्मूलनम् ।
सर्वे सन्ति च राजनीतिक-दलास्तत्रैकमत्ये स्थिता -
श्चण्डी दण्डन-पण्डितां भजत रे! मन्त्रोद्भटाः पण्डिताः! ॥74॥

चालू धर्म-विरुद्ध युद्ध अब तो पापिष्ठ का साधु से,
सारा शासन-तन्त्र ही चल पड़ा है जातियाँ तोड़ने ।
सारे ही, इस काम को, दल यहाँ पाये गये एक हैं,
हेला दो तुम चण्डिका-चरण को मन्त्रोद्भटो! पण्डितो! ॥74॥

A war of saints and sinners goes on fast.
The State is out to break the faith in caste.
Politic parties, for that, congregate.
Call Caṇḍī for help, paṇḍit'-mystics, great. 74.

वन्दे-त्रिपुरसुन्दरीम्

कृता हिंसा हेयाः कियदपकृतीरप्यनुगताः

कृतं दौर्जन्येन व्यभिचरण-लीला-व्यतिकरम् ।

अघौघानामोघं कथमपि समुद्धूतमधुना

तिरस्कुर्वत्यम्ब! प्रकटमुपदेशं दिश मम ।।75।।

भले, हिंसा की हो, अपकृति, भले ही, बहुत सी,

कभी आया होऊँ, व्यभिचरण की भी चपट में ।

अघों की कैसी भी, कृति बन पड़ी हों, अब उन्हें

भुला दे री माता, खुल पथ बताती रह मुझे ।।75।।

Some violences, sins, I must have done,

And faithlessness, I, sometime, must have spun.

Whatever blemishes, whate'er their source,

Excuse me, Goddess ! be my guiding force. 75.

तुलस्या संपृक्तं कुसुम-सहितं चन्दन-चिते
धृतं सद्य:पूर्णे हरिचरणयोस्ताम्र-पुटके ।
तृणागारे ग्रीष्मे भजति कुल आरोग्यमनिशं
वयं विष्णोः पूजा-सलिलममृतं मन्महे इमे ॥76॥

हरिश्री के आगे, स-सुम-तुलसी-चन्दन-चिते
अभी माँजे, धोये, प्रखर निखरे ताम्र-पुट में ।
निदाघी वेला में, तृण-गृह-बसे स्वस्थ कुल में,
लगा है पूजा का, जल अमृत के तुल्य हमको ॥76

Bedecked with sandal, flowers and Tul'sī blad
Just filled in copper pots, in straw-hut-shades
In summer, with the healthy kins, secure,
God-worship-waters turn elixir pure. 76.

प्रकीर्णाः प्रासादा विशद-बहुभूमा दिशि दिशि
न कार्पण्यं पुंसां तदधिवसनेनैव गलति ।
उदारा जायन्ते प्रकृति-कृतिनश्चापि विपिने
सदा भव्याऽऽभोगो भवति विनियोगो न महसाम् ॥77॥

बने हैं शोभा के, महल धरती के तल बड़े
वहाँ सोने से ही, बस, न मिट जाती कृपणता ।
गुणी पाये जाते, लघु-सदन में भी विपिन में,
नहीं सम्पत्सत्ता, जन-सुगुणवत्ता-कर सदा ॥77॥

The world abounds in mansions, with fair fence,
The greed is not marred by there residence.
Good souls could be found in a forest den.
The stately structures can't make stately men.77.

यदाऽऽलोकाल्लोकश्चकितचकित: सम्भवति ते
गिरावुत्पद्यन्ते नगर-रमणीया हि मणय: ।
दरिद्राणां किं वा किमपि महरस्त्येव महतां
सदा तेजस्तेजो भवति विजने वा जनपदे ।।78।।

चकाचौंधों से जो चकित कर देतीं मनुज को,
पहाडों में जन्मीं नगर-निधि वे श्रेष्ठ मणियाँ ।
महात्मा नि:स्वों की कुछ अलग ही भाव-गरिमा,
रहेगी भा तो भा, विजन वन हो वा नगर हो ॥78॥

Whose lustres please the world, with charming shocks,
The splendid gems are born in mountain-rocks.
The great, though poor, possess some bearings high,
Lights are lights if, in woods or towns, they lie. 78.

प्रभाता प्राच्यादावुषसि रविरागं श्रितवती
प्रतीचीं दूरस्थाऽप्युपदिशति शोभाऽर्जनमिव ।
किमाश्चर्यं वीक्ष्य स्मर-शर-जित-स्त्री-सुरचनां
युवत्यः सीमन्ते ददति यदि सिन्दूर-पदवीम् ? ।।79।।

प्रतीची को प्राची, उदित सविता के रँग-रँगी,
सिखाती सी दूरस्थित सुरख शृंगार करना ।
अचम्भा क्या ? शोभा स्मर-जित-नरी की निरखती,
कचों में बालाएँ ललक यदि सिन्दूर भरतीं ।।79।।

The east, at dawn, presenting the red view,
Instructs the west, as if to change its hue.
No wonder, watching sensual ladies, girls
Are led to put red lead, in hair-line-curls. 79.

मुधा मुग्धैरुक्तं युवति-वदनं पद्म-सदृशं
तथा पुंसां प्रीतिं कमल-शत-शोभा वहति किम् ?
कराऽग्राऽग्र-क्षुण्णं भवति दलितं पङ्कज-दलं
मुखं स्वास्थ्यं याति प्रखर-दशनैश्चर्वितमपि ॥80॥

कहा है मूर्खों ने, युवति-मुख अम्भोज-सम है,
न देते लोगों को वह सुख न सौ-सौ कमल भी ।
नखों नौंचा जाता, कुचल गलता अब्ज-दल तो
रदों से काटा भी मुख फिर वही रंग भरता ॥80॥

With lotus, dunces liken ladies` face,
could hundreds of those flowers have that face-grace?
The lotus-blades are killed with finger-tips,
Though crushed with teeth, revive the ladies` lips.80.

कटिं तिर्यक्कृत्वा तदुपरि निधायोन्नतकरं
पुनःपीनोरस्के! सुपरिसर पादोम्भित-यतिः ।
शृणोति व्याहारानिति परिषदामस्त-गरिमा
वराकी नृत्यन्ती विपणि-वनिता नो कुलवधूः ॥81॥

'अहा! हा! थोड़ी सी कमर तिरछी और कर ले,
उठी छाती वाली ! कटि पर उठा हाथ धरले ।
छमाछं पैरों से ठुमक चल' ये बोल सुनती
नचे यूँ बेचारी, विपणि-वनिता, ना कुलवधू ॥81॥

"A bit more bend and raise your hand, waist there,
With high-breast-heats, accomplished beats, dance here."
A harlot hails such howlings of the crowd.
'Tis not so with the honoured house-wives, proud. 81.

महोत्कण्ठामूलं कलितमनुकूलं विषयिणां
क्षणाधारं यूनामनुदितवसूनामपि सताम् ।
प्रकृत्या यत्पुंसः प्रभवति विकर्तुं वयसि य-
न्न जाने कुत्रेदं युवति-जन-रूपं व्रजति हा! ॥82॥

भरे जो उत्कण्ठा, विषयि-नर में भोग-सुख की,
बना दे उत्साही, धन-रहित भी सत्तरुण को ।
करे जो ज्वानी में, विचलित नरों को सुपथ से,
न जाने खो जाती, युवति-छवि-सत्ता वह कहाँ! ॥82॥

Which, in enjoyers, heightens eagerness,
And hopes, in young men, far from wealth-access,
Which pushes men astray , at their youth-rise,
I know not where the womens` beauty flies! 82

वरा तत्त्वज्ञानां प्रखर-पद-तिक्ता मति-सुधा
न चान्येषामिष्टः श्रवण-मधुरो वर्ण-विसरः ।
प्रशस्तिं शाठ्योत्थां रुचि-कर-कलापैरपि कृतां
ज्वरोन्मुक्तौ मिथ्यां क्षुधमिव न सम्भावय, सखे! ॥83॥

भली तत्त्वज्ञों की प्रखर कड़वी भी मति-सुधा,
न अच्छी औरों की श्रुति-मधुर भी शब्द-रचना ।
प्रशंसा हो चाहे रुचिर पर जो शाठ्यज उसे
क्षुधा मानो मिथ्या, ज्वर उतरने के समय की ॥83॥

The caustic comments that the experts raise,
Are more important than the other's praise.
Don't entertain applause by cheats alone,
Like appetite false, after fever gone. 83.

धनाढ्यान्विद्याढ्यान्बहुविध-सुखाढ्यान्सुकृतिन:
सनाढ्यान्रूपाढ्यान्गुणि-जन-कुलाढ्यानपि कवीन् ।
विनिन्दन्तत्सर्वं गुणमभिलषन्नात्मनि जन:
करोति व्याहारै: पिहित-लघुताया विवरणम् ॥84॥

धनाढ्यों, विद्याढ्यों, बहुविध-सुखाढ्यों, सुकृतियों,
सनाढ्यों, शोभाढ्यों, गुणि-कवि-कुलाढ्याऽभिजन को ।
बुराई देते भी, उन सब सुखों को ललकते,
दिखाते वाणी से मनुज निज ओछापन ढका ॥84॥

The men, abusing rich men, scholars bright,
Saints, virtuous poets, handsome persons right,
Though craving all that, yield their state of wills,
Their jealous words betray their hidden ills. 84.

धिक् समीक्षकमानिन:

निरादर्शं काव्यं कृतक-विधि-वाक्यैः परिवद-
न्नुताऽऽदर्शोपेतं रचनमपि रोषाद्विकथयन् ।
नर! त्वं को व्यर्थं नवल-नवलाऽऽकल्पित-मिषैः
कवीनां साम्राज्यं कथमसि विकर्तुं कृतमतिः? ॥85॥

कलार्थी काव्यों को कृतक-विधि से निन्दित बता,
भले आदर्शों की कलित-कृति को भी कुतरता,
अरे! तू क्या है रे! नर! नित-नये-कल्पन-मिषों,
पड़ा पीछे क्यों तू, विकृत, कवि-साम्राज्य, करने? ॥85॥

Deriding aimless works, with dicta false,
condemning aimful forms of art, with galls,
Who are you, man, with new excuses, vain ?
Why are you out to stain the poets` reign ? 85.

समर्था वाशक्ता ददति जगतां वक्षसि पदं
न कीर्त्यै कृत्यं तद्द्विविधमपि दोषास्पदमिदम् ।
मुदा श्रावं श्रावं गदितमविदाऽनर्गलमतो
बुधानां बालानामपि च परिभावञ्जहि सखे! ॥86॥

लगाते, छाती में, सबल, अबली, लात, जग की,
किसी से, दोनों में, कुछ न कहना ही उचित है।
सुने जाओ, धीरे, मुदित मन से बोल उनके,
बुधों को, बच्चों को झिड़क मत देना तुम, सखे! ॥86॥

The powerful or the powerless could kick all.
In any case, you need not show your gall.
You should, fain, bear their reinless railling, dirts,
But ne'er condemn, friend, children and experts. 86.

विधाय स्वाख्यानं प्रकट-महिमानं श्रितवता-
मपि स्फीता कीर्त्तिर्नियतमपकीर्त्तित्वमयते ।
स्वयम्भाषे लोकः कलयति कलङ्कं कमपि त-
द्भवत्यात्मश्लाघा जगति परिवादस्य पदवी ।।87।।

यशस्वी स्वार्हा को निज मुख बखाने यदि कहीं,
प्रशंसा निन्दा में, झट, बदल जाती, मनुज की ।
स्वशंसी लोगों में जन समझ लेते कुछ कमी,
रहे आत्मश्लाघा कुयश करवाती भुवन में ।।87।।

If one describes one`s virtues, leaving shame,
One`s fame, abruptly, takes the shape of blame.
Men, in self-praisers, doubtless deem some spot,
So self-applause becomes the cause of blot. 87.

यथा हावो हेला, रति-जलधि-वेला-विलसतां
सुखं सद्यः कान्ता-कुशल-पद-बन्धादि कुरुते ।
तथा पुंसां काव्ये कृत-मति-विभाव्ये कृति-भवं
महत्त्वं व्यङ्ग्यं चेत्तदिह महिमानं वितनुते ॥88॥

यथा स्त्री के हेला, रति-जलधि-वेला-विलसते
नरों को, नारी के कुशल-पद-बन्धादि सुख दें ।
तथा श्लाघा पक्की, कृतमति-जँचे श्रेष्ठ कवि के
किये काव्यों में जो झलक महिमा की मिल सके ॥88॥

As ladies` gestures, stirring sexual sense,
And playful shows are sure to sate their fans,
sure is the fame of artists, poets wise,
If, in their works, high implications rise. 88.

महत्तामात्मीयां सदसि सहसोक्त्वा स्ववदना -
　　द्गुरूणां साम्मुख्यं परिहरति योऽस्तव्यतिकरः ।
स कृत्वा धृष्टत्वं प्रथम-मिलने केलि-समये
　　पुनः कान्तालोके चकित-मति-कान्ता-जन इव ॥89॥

सभा में स्वार्हत्ता स्वमुख निकली देख, गुरु से
　　छुपाता आँखें जो सिकुड़ सकुचाता वह कृती ।
किये बैठी क्या-क्या, प्रथम मिलने के समय ही,
　　पिया आगे आती चकित चकराती युवति-सा ॥89॥

The authors, guilty of abrupt self-praise,
For shame, avoiding their preceptors gaze,
Resemble brides that, in their first embrace,
Exposing full, their husbands, dare not face. 89

तनौ स्थित्वा स्थित्वा चलति पुलकानां कुलमहो!
यश: श्रुत्वा शीर्षं नमति च नवोढा-जन इव।
मनस्येवं भूयो भवति भविता किं परमत:
प्रशंसा पात्राणामचिर-परिणीता-पतिरिव ।।90।।

उठे, हाँ, अंगों में, कुछ गुदगुदी सी, उमँग सी,
नई व्याही का सा झुक-झुक पड़े सीस सुन के।
घटेगा आगे क्या यह उभरता भाव मन में,
प्रशंसा पात्रों की अचिर-परिणीता-पति बने ।।90।।

Confronting praise, men, just like brides, are coy,
Their body has a surge of thrills of joy.
" What would be next ", such fears are, in them, raised.
Thus praise becomes the husband of the praised. 90.

अध: कृत्यात्मानं विनय-वचसा ग्रन्थरचने
प्रशंसा-साम्मुख्ये सुरति-मतिमन्तर्वहति या ।
न नो नो कूजन्ती मनसि महिते चापि गमने
न सा विद्वन्माला ललित-ललनेवाचरति किम्? ॥91॥

स्वयं को नीचे ला, विनय-भर से, ग्रन्थ रच के,
प्रशंसा पा होती चुप, मुदित होती हृदय में ।
सुनाती ना, ना, ना, मन ललकती भी गमन को,
न क्या विद्वन्माला, ललित ललना सी लग रही? ॥91॥

Presented with praise for composing books,
Full of self-slighting words, but wistful looks,
Repeating 'no' by tongue yet 'yes' by heart,
Don't authors act like graceful ladies, smart?91.

समग्रं सौभाग्यं भवति सधवानां प्रियतमे
प्रतिज्ञाता प्रीतिस्तदनुचरणञ्चैव शरणम् ।
कथं सूक्ष्मे वस्तुन्यपि बत सतर्केण विधिना
मिथोऽनासक्तानां परिणय-विधिर्हा! व्यवसितः ॥92॥

सहारा नारी की, सुभग-विधि-संजात-पति से,
प्रतिज्ञा मैत्री की, अनुचरण ही सार जिसका ।
सभी बातों में हा ! अवहित बने स्वस्थ विधि ने
रचाया क्यों ऐसा परिणय जहाँ प्रीति न चले ॥92॥

The spouses` luck is the contracted love,
Its sincere observance is all above.
But why did God, the manager so stout,
The un-successful weddings, bring about ? 92.

वैराग्यं बाधते सुतः

भुज-स्वल्पाऽऽरम्भैश्चपल-मुख-कल्पैःसविरुतं
समुत्कण्ठा-तल्पैरभिलषितमावेदितवतः ।
शिशोर्मात्रुत्सङ्गे· लुठित-हसितैः सस्मित-पितुः
सुत-प्रेमोत्सेधो विरति-विनिषेधो विजयते ।।93।।

चलाता नन्हें से कर, मुख बनाता, मचलता,
भरा उत्कण्ठा से शिशु कह रहा बात मन की ।
तभी माँ की गोदी, सुत-सुरति बोली बिगसते
पिता से- 'संन्यासी बन निकल जाना न घर से ।' ॥93।

With dancing tiny limbs, and facial whims,
Revealing glimpse of what wish in him swims,
In mother's lap, the son, when, laughs and plays,
Love bids glad dad to keep off hermitage. ·93.

महा-शिक्षा-स्थानेष्वधिगत-महा-शिक्षक-पदा-
न्महा-शिक्षा-नाम्ना तरुण-तरुणी-वञ्चनपरान् ।
महा-मूल्यं लब्ध्वा निज-गृह-महाऽध्यापन-रता-
न्महा-धन्यम्मन्यान्मनुज-महिषान्धर्षय सखे ! ॥94॥

महाशिक्षास्थानों पर झुक महा-शिक्षक बने,
बहाने शिक्षा के तरुण-तरुणी-वञ्चन-तने ।
बड़े पैसे लेके निज-गृह-महाऽध्यापन-सने,
चलो आत्मश्लाघी मनुज-महिषों को कुचलने ॥94॥

At colleges who pick Professors' posts,
Through private coaching cheat boys, girls, in hosts,
Conducting sales of education-shows,
Friend, kick those egotist black buffaloes. 94.

इयन्मात्रा निन्दा भवति कुजनानां धनवतां
तथापि प्रत्यक्षं मनुज-कुलमेतान्प्रणमति ।
विना दण्डं दुष्टो विलसति समाजे यदि तदा
कथं नान्यः कुर्यादनुचित-धनोपार्जन-मतिम्? ॥95॥

भले होती निन्दा बहुत, धन-धारी कुजन की,
मनुष्यों की टोली झुक-झुक करे मान उनका ।
खुले डोलें यों ही, खल खिलकते जो भय-बिना,
कहो क्यों ना सीखें इतर जन पैसा हड़पना ? ॥95॥

Rich rogues are censured so much, all the same,
The pack of people greets them, turning tame.
They move so free and no one intervenes.
Why won't men learn to earn by sinful means?95.

वरं वित्ताऽभावो भवतु परिभावो भुवि किया-
न्धनाऽधीनं मानं कथमपि विकत्थेत कुमतिः ।
दधाना उत्कोचैरनुचित-विधानाऽर्जितधनं
तितिक्षूणां तेजस्तुलयितुमशक्ता धनि-खलाः ॥96॥

धनाऽसत्ता चाहे प्रथित, जन में मान-हननी,
प्रतिष्ठा को मानें कुमति कितनी भी धन-जनी ।
बढा लें घूँसों से द्रविण कितना भी खल-धनी,
तितिक्षा-सेवी के सम न उनकी शक्ति बननी ॥96॥

Let want of wealth be thought a great insult,
And let men boast of wealth-based-honour-cult.
Through black-mails, bribes, collecting wealth for show,
The rich rogues can't match patient persons` glow. 96.

सदाचाराभासं विपदि ददतो दीनवचनैः
खलाः शक्ता भूत्वा विदधति विनाशं भुवि सताम् ।
दया नो कर्त्तव्या क्वचिदपि खले सङ्कटगते,
प्रमाणं शास्त्राणां प्रथित-कथनं पात्र-विषये ॥97॥

अभावों में पापी सुजन बन जाते, विनत हो,
सताते ही जाते, सबल बनते ही, सुजन को ।
खलों के दुःखों में, तनिक अनुकम्पा मत करो,
यही तो शास्त्रों का प्रथित मत है पात्र-विषयी ॥97॥

Rogues look, in pains, as if they have not taints
But gaining strength, they go on paining saints.
So don't save vile men when they face distress.
The Scriptures mean so by Man's properness. 97

निवेश: शक्तीनां भुवि भगवतेत्थं प्रकलितो
यथा शिष्टा सृष्टिश्चलति तुलितोद्योग-घटना ।
मदोन्मत्तो लोक: किमनु किमनिष्टं न घटये -
न्न मन्त्रज्ञ-क्रोधो दुरित-गति-रोधो भवति चेत् ॥98॥

विधाता ने बाँटा इस विधि बलों को कि जगती
व्यवस्था पा जाती जब डगमगाती विकल हो ।
घमण्डी क्या-क्या ना अनुचित किये जायँ जग में
रुषा मन्त्रज्ञों की खल-कुल-कशा-सी यदि न हो ॥98॥

The forms of powers, God has so well installed
That earth, at times, gets balanced and controlled.
The chain of crimes, the wicked would maintain,
If mystics` anger had not been their rein. 98.

प्रसूते सद्भोगान्विविध-सुख-योगान्भुवि धनं
परं सन्तस्तस्मै विदधति विगीतं न करणम् ।
अभावे द्रव्याणां तपति नियतं मानव-मनो
दरिद्रं नो कुर्यात्सुजनमिह धाता गृहपतिम् ।।99।।

सुभोगों की माता, विविध-सुख-दाता, धन यहाँ,
भले प्राणी तो भी न पथ गहते निन्द्य उसको ।
दरिद्रावस्था में मनुज-मन सन्तप्त रहता,
बनाये ना धाता अधन गृह-पाता सुजन को ॥99॥

Homes could be well maintained by dint of wealth,
Yet house-holders, good, could not live by stealth.
Confronting wants, their brains have hearvy strains.
Good house-men shouldn't be short of money-gains. 99.

सखे! विश्वासश्चेदनुपकृतलोकादुपकृते-
वृथा कः कस्मै किं कुरुत इति नो ते परिचयः।
सुहृद्भावोन्नत्यै विनत उपकारं कुरु जने
प्रसन्नो दुष्टोऽपि द्रवति सुजनानां क्व तु कथा ?॥100॥

भरोसा लाभों का, अनुपकृत से भी यदि तुझे,
किसे कोई क्यों दे कुछ, यह नहीं तू समझता ।
बढ़ाने मैत्री को विनत उपकारी रह बना,
सुखी हो, जाते है पिघल खल भी, क्या सुजन ना? ॥100॥

From un-obliged world, if you hope some gains,
You don't know who, without some cause, takes pains.
Help people pained politely, make friends` force,
Let saints alone, pleased rogues too melt, of course.100

अपीद्धं यद्राष्ट्रं कथमपि खल-प्रीणन-परं
परं राष्ट्रं प्रीत्या समुपचरतीव स्वकरणै : ।
सदाचाराभास: कृतक-महिमा नेतुरिति नो
क्षमस्तद्रक्षायै न विधिरनुकूलो यदि भवेत् ॥101॥

अधर्मी जो दुष्टोन्नति-परक हो राष्ट्र, अपने
सुखों के स्त्रोतों से, सफल करता शत्रु-सपने ।
उसे झूठा नेता, कृतक-महिमाभास भरता
बचाता ना, धाता यदि न उसका त्राण करता ॥101॥

If some rich nation goes on helping foes,
Appeasing scoundrels, with her means and vows,
Her leader's all concocted glory, pace
Can't save her if God doesn't extend His grace. 101.

पिपासा साक्षाणां नहि भवति यावत्प्रतिकृता
नरस्तावज्जेतुं वियदवनिमन्यच्च यतते ।
परं सोऽयं श्रीमान्समुपनत आत्मेन्द्रिय-सुखं
गतं स्मारं स्मारं रसयति निजं शान्त-करणः ॥102॥

पिपासा अक्षों की जब तक मिटे ना मनुज की
धरा-व्योमाद्यों को तब तक हिलाने निकलता ।
वही हो जाता है जब सधन आत्मेन्द्रिय-सुखी,
गतावस्थाओं के स्मरण-रस में ही विचरता ॥102॥

Unless the thirst of sense is satisfied,
Man thinks of moving earth and space so wide.
But when he has the mental peace and wealth,
He muses on the past, enjoying health. 102.

न यावत्कामिन्या:कुटिल-नयनाली-विचलितं
मनस्तावत्क्लीबं तदितरविधेऽर्थे विचरति ।
समुद्यत्सौन्दर्योल्लसित-महिलालोक-लुलितं
नपुँल्लिङ्गं · चेतोऽप्यभिसरति पुँल्लिङ्गवद्हो! ॥103॥

सकामा वामा की, जब तक पड़ें ना कनखियाँ,
बना क्लीबाचारी, इतर विषयों में विचरता ।
जवानी से फूली, ललित ललना को ललकता,
नृलिङ्गी· हो जाता, बरबस, नपुँल्लिङ्ग मन भी ॥103॥

Unless the leers of lasses land on mind,
This neuter, sticks to joys of other kind.
Before the youthful ladies` beauties, fine,
Man`s mind, though neuter, just turns masculine. 103.

न सा भव्या भङ्गी, ललितमधराणां विवरणं
न चौदार्यं स्त्रीणां, प्रणयिनि जनेऽप्युन्नत-गुणे ।
चिर-स्थैर्यं भुङ्क्ते प्रकृति-चपले चेतसि वृथा
कथा नित्य-प्रेम्णो, युवति-विषये वा नृ-विषये ॥104॥

स्त्रियों की मुद्रायें, ललित अधरों का बिगसना,
गुणी प्रेमी में भी, सुरुचि-कर औदार्य रखना ।
टिकाऊ ना होते, प्रकृति-चल-चित्तों रति-कथा
वृथा होती देखी, युवति-जन हो वा नर-युवा ॥104॥

The poses grand, the style of lips, express,
To lovely lovers, ladies` lavishness,
Do not last long . In fleeting fancies then,
'Tis vain to talk of constant maids or men. 104.

अहो! सा मे स्फूर्त्तिः, करण-पटुता बाल-सुलभा,
विचाराणामौग्र्यं, नवल-सबला साहस-कला ।
विधा सोत्साहानां, स्मृति-पथमुपायाति च यथा
तथा प्रज्ञा-स्थैर्य रचयति गभीरं मम मनः ॥105॥

अहा! वैसी फुर्ती, नवल-वय की अक्ष-पटुता,
विचारों की तेजी, सबल सरती साहस-कला ।
विधा उत्साहों की, स्मरण-गत होती जब कभी,
बना जाती मेरी, अचल मति, गम्भीर, मन को ॥105॥

When I recall my pleasant powers of sense,
The reckless thought, the fortitude intense,
The movement swift, the attitude so brave,
My ripened reason constitutes me grave. 105

सखे! संसारोऽयं परम-रमणीयः परमिह
प्रसङ्गः पीडानां परिणमति प्रीति-प्रतिहतौ ।
विरक्तिं को गच्छेदपरिमित-शोभे यदि भवे -
न्न शोकाशङ्कात्र प्रकट-करुणेऽप्युत्सववताम् ॥106॥

सखे! माना मैंने, अति-सरस संसार-सरणी,
विपद्व्यासङ्गों से, पर, बिगड़ जाता मन यहाँ ।
विरागी क्यों कोई, मनुज बनने को निकलता,
न शोकों की शंका, यदि सुलभ होती भुवन में? ॥106॥

The world is highly fascinating, friend !
But bad luck tends to rend our pleasures, planned.
Who would become a hermit, on this earth,
Had not the fear of pains been marring mirth ? 106.

भेदः क्रूर-कृपालयोः

अकाण्डेष्वप्युग्रं प्रहरति यदेको धृत-बलः
प्रसङ्गेऽप्याघाताद्विरमति बलिष्ठो यदपरः ।
क्रमेण क्रूराणां सदय-हृदयानां विधिरसौ
जने शक्त्युत्कर्षो निशित-करपत्रं कर इव ॥107॥

बली जो थोडे भी अपकृत, बड़ी चोट करते,
बड़ी बातों में भी कुछ सहम जाते दमन से ।
क्रियायें ये क्रूरों, सदय-हृदयों की प्रकृति की,
बलों की सत्ता तो मनुज-कर में खड्ग-सम है ॥107॥

Some powerfull men, without much cause, strike hard,
While others, hurt much more, their strokes, retard.
Harsh and kind men`s that`s the respective stand.
Might is, of course, in Man, a sword in hand. 107.

असन्तः सन्तो वा, स्व-कृति-जनिताः सन्ति जनितो
नरो नो धर्मात्मा, भवति भुवि कस्यापि कथनैः ।
सहन्ते स्वेच्छातः, कलि-जनित-कष्टानि मुनयो
भयाद्वा लोभाद्वा, त्यजति निज-धर्मं न हि कृती ॥108॥

बुरे वा अच्छे वा, जन जनित होते जनन से,
न धर्मात्मा होता, नर-वर, किसी के कथन से ।
सहे जाते योगी, कलि-कलित पीडा स्व-मन से,
न छोड़े धर्मास्था, मुनि न भय वा लोभ-धन से ॥108॥

The karmas make men good or bad, by birth,
By asking, none acquires religious worth.
Saints bear the kali`s pains with their own lead.
For fear or greed, they don't dismiss their creed. 108.

असूया-ग्रस्त
प्रयास
सतां मन्त्र
विनाश

कुढ़ैला ल
प्रयासो
भलों के
खलों

To baffle
O! mysti
By good
The furi

असूया-ग्रस्तानां, सुजन-सुख-शान्त्यादि हरतां
प्रयास-ध्वंसार्थं, भजत बगलां रे! द्विजवराः!
सतां मन्त्र-प्रीता, प्रबल-खल-भीतार्त्ति-हरणी,
विनाशं शत्रूणां, दिशति निशिता सा भगवती ॥109॥

कुढ़ैला लोगों के, सुजन-सुख-शान्त्यादि हरते
प्रयासों को ब्रह्मन्! कुचल, बगला-ध्यान धरते ।
भलों के मन्त्रों से, रिपु-जनित-सन्ताप हरती ।
खलों के खेमों का, दमन करती है भगवती ॥109॥

To baffle jealous men, offending saints,
O! mystic! Dvij' ! to Bag'lā, put complaints.
By good man's mantr', arresting hostile rows,
The furious Goddess flouts the file of foes. 109.

भगवत्ता सुखप्रदा

परैश्वर्याऽऽकारा, सुजन-वरणा धर्म-चरणा,

यशोधाराऽपारा, चरम-सुखद-श्री-प्रसरणा ।

सम-ज्ञानोपेता, विरति-परमेताश्रमपदा

सदा शर्वायत्ता, सुभग-भगवत्ता हि सुखदा ॥110॥

परैश्वर्याऽऽकारा, सुजन-कुल की धर्म-चरणी,

यशोधाराऽपारा चरम-कमला-शर्म-करणी ।

सभी ज्ञानों वाली, विरति-रति-चारम्य-चण है,

कपाली की पाली, सुभग-भगवत्ता शरण है ॥110॥

Full sovereignty; the best of virtue - force;

The finest fame; the greatest of wealth -source;

The mightiest Muse; full non-attachment broad,

I long for fortunes such, subject to God. 110.

यया हीनो हेयो, भवति परिहासं च लभते,
कृपा-पात्रं यस्याः परिचरति लोको नत-धिया ।
स्वतन्त्रोद्योगानां, दिशमुपदिशन्ती प्रसरतां
शिवानां श्रीव्यक्तिर्जगति भवशक्तिर्विजयते ॥111॥

हँसी हो, निन्दा भी, बहुत जिनसे हीन नर की,
सभी का हो जाता, प्रियतम, कृपा-पात्र जिसका ।
स्वतन्त्रोद्योगों की सरणि दिखलाती, पसरते
शिवों की श्री-माला उस भव-कला की विजय हो ॥111॥

Bereft of That, men, jeered at, grow absurd,
And graced by That, men are esteemed, well served,
Suggesting ways, inventing welfare cells,
With fortunes, That, Çiv'-Force, divine, excells. 111.

सप्तश्लोकमयी सार्था प्रणीता काव्य-पुष्पिका ।

काले काले कृत-श्लोक-सूक्तिपञ्चामृतस्य तु ।
कृतोऽक्षय-तृतीयायां प्रकाशो मूलमात्रक: ॥1॥

अर्थ :- समय-समय पर रचे गये सूक्ति-पञ्चामृतम् के श्लोकों का मूलमात्र प्रकाशन अक्षय-तृतीया को किया गया था ॥1॥

सैषाऽक्षय-तृतीयाऽसीद्वैशाखे रविवासरे ।
शास्त्र-चन्द्र-नभो-नेत्र-निर्मिते वैक्रमाब्दके ॥2॥

अर्थ :- वह अक्षय-तृतीया, विक्रम-संवत् २०१६ के वैशाख में रविवार को पड़ी थी ॥2॥

सूक्ति-पञ्चामृतोत्पत्त्याश्चत्वारिंशत्समा अनु ।
कृता सम्पूर्ण-मिश्रेण परिवर्धन-पूर्णता ॥3॥

अर्थ :- सूक्ति-पञ्चामृत की रचना के चालीस वर्ष बाद सम्पूर्ण दत्त मिश्र ने इसमें कुछ और श्लोक जोड़कर इसे सम्पूर्ण बनाया ॥3॥

एकोत्तर-शत-श्लोकात्मकं मूल-कलेवरम् ।
एकादशोत्तर-शत-श्लोकं जातं तु साम्प्रतम् ।।4।।

अर्थ :- एक सौ एक श्लोकों का इसका मूल-कलेवर अब एक सौ ग्यारह श्लोकों का हो गया है ॥4॥

सूक्ति-पञ्चामृतं काव्यं मिश्र-सम्पूर्ण-निर्मितम् ।
यामनाखे बुधे व्यास-पूर्णिमायां प्रपूर्णितम् ।।5।।

अर्थ :- सम्पूर्ण दत्त मिश्र का बनाया हुआ यह सूक्तिपञ्चामृत काव्य विक्रम-संवत् २०५६ (यामनाखे) की व्यास-पूर्णिमा को बुधवार को सम्पूर्ण हुआ ।।5।।

त्रिगुणादधिकं जातं साऽनुवादं नवोदितम् ।
नवीनमेव मन्तव्यमस्मिन्वर्षे प्रकाशितम् ।।6।।

अर्थ :- अनुवादों के साथ, नये रूप में, तिगुने से भी अधिक बढ़ा, इस बर्ष में प्रकाशित, यह काव्य नवीन ही मानना चाहिये ।।6।।

एतद्धिन्द्याङ्गली-भाषा-द्वय-पद्येष्वनूदितम् ।
मया सम्पूर्ण-मिश्रेण प्रीणीयान्मम सुन्दरीम् ।।7।।

अर्थ :- मुझ सम्पूर्ण दत्त मिश्र के द्वारा हिन्दी और इंग्लिश के पद्यों में अनूदित यह (सूक्ति-पञ्चामृत नाम का काव्य) मेरी सुन्दरी को प्रसन्न करे ।।7।।



ग्रन्थकार की बात

कविभिः क्रियते प्रायः सूक्त्यारोपः स्वकोक्तिषु ।
वरं भवेयुरेतासु सामान्या वाऽपि कूक्तयः ।। १ ।।

अर्थ : कवि लोग प्रायः अपनी उक्तियों को सूक्ति ही बताया करते हैं चाहे उनमें कितनी भी सामान्य उक्ति वा कूक्तियाँ भी भरी पड़ी हों ।। १ ।।

स्वमुखेन वरं कोऽपि घोषयेत्स्ववचोऽमृतम् ।
किन्तु सन्तो हि जानन्ति पीयूषं वा विषं हि तत् ।। २ ।।

अर्थ : अपने मुख से चाहे कोई अपने वचन को अमृत ही बताता रहे परन्तु यह तो सज्जन ही जानते है कि वह अमृत है वा विष है ।। २ ।।

पञ्चामृतरसारोपो मत्सूक्तिषु कृतो मया ।
तादृश्यः सन्ति ता नो वा प्रमाणं तत्र पण्डिताः ।। ३ ।।

अर्थ : मैंने भी अपनी उक्तियों को सूक्ति बताते हुए पञ्चामृत के समान बता दिया है । अब वे वैसी है भी वा नहीं यह तो पण्डित ही जानें ।।३ ।।

- कविपुण्डरीकः

संम्पूर्ण-दत्त-मिश्र

प्रतिष्ठा मे - 21-8-99

आचार्य प्रवर कविपुण्डरीक
श्री सम्पूर्ण दत्त मिश्र
उल्लासश्रीभवनम्, गोपालगढ़ भरतपुर (राजस्थान) ।

शेते यच्चित-पत्रे जलनिधि-तनया-जानिराश्वस्त-वृति
श्चञ्चत्काव्य-प्ररोहा विदधति रूचिरं शारदा-केलि-हर्म्यम् ।
वृन्ते वृन्ते निलीना नव-रस-विहगा भुञ्जते यत्फलानि
न्यग्रोधं सप्तशाखं तमिह सविनयं नौमि सम्पूर्णदत्तम् ।।

वाणी यद्भाव-चेष्टाऽनुकृति-सहचरी दिव्य-भावं प्रसूते
स्वाच्छन्द्यं यस्य सिद्धं स्तिमित-सहृदयं किञ्च वृत्त-प्रयोगे ।
सम्प्राप्यार्षी प्रतिष्ठां पुरहर-गृहिणी-पाणि-संस्पर्श-धन्यो
मान्यः सम्पूर्णदत्तो भरतपुरि सुखं शास्ति कालं कवीन्द्रः ।।

प्रणमति सविनयं मिश्रोऽभिराजराजेन्द्रः सर्वतन्त्रस्वतन्त्रं सारस्वत-व्योम भास्करं विद्वन्मतल्लिकामाचार्यप्रवरम् । समवाप्तं प्रागेव यथावसरं भवदीयं पत्रम् । भवच्चित्रं रूप-सौन्दर्य-निधान-भूतं पूर्वप्रेषितमेव मया प्रकाश्यते । सर्व कान्तमात्मीयं पश्यत्येव । तत्रादि पुनर्भवन्तः कान्ततमा मत्कृते ।

अन्यत्सर्व पराम्बाकृपया शोभनं वर्तते । भवदीयामनन्यसाधारणीं काव्यप्रतिभां भाषारहस्यपारङ्गततां वश्य-वाणी-चक्रवर्तिताञ्च दर्श दर्श परं विस्मयमुपैमि । भवत्सदृशं नाऽन्यं पश्यामि संस्कृतजगति । मयि वत्सला भवन्त इत्यनुभूयैव कृतार्थतायाः पूरां कोटिमधिरूढोऽस्मि ।

--------- --------- ---------

क्षन्तव्योऽस्मि प्रमादार्थम् । भवन्तः पितृकल्पाः ।
भवद्वात्सल्यगर्विततयैव कदाचिदसाम्प्रतं विधीयते । सप्रणामम् -

मिश्रः अभिराजराजेन्द्रः
Dr. Ranjendra Mishra
Professor & Head Sans. Deptt.
H.P. University, Shimla-5
Dean, Faculty of Languages
☎ (0177) 231407

ऋतूल्लासः

स्वल्पाकारमपि प्रसाद-मधुरं काव्यं सुधा-वर्षणं
निर्मायैतदनाविलं खलु ऋतूल्लासाऽभिधानं कविः ।
विश्वेषां कविताकृत्वां सुमनसां चेतांसि सम्प्रीणयन्
लब्ध्वाऽयं कविपुण्डरीक-पदवीं जीयात्सतां संसदि ।।

- स्वामी अमृतवाग्भवाचार्यः

सूक्तिपञ्चामृतम्

श्री-सम्पूर्ण-विनिर्मितं सुमधुरं श्री-सूक्तिपञ्चामृतं
काव्यं नव्य-रसाऽनुकूल-रचनाऽलङ्कार-रीत्युज्ज्वलम् ।
दृष्टा कर्णपुटैर्निपाय च वयं मग्नाः प्रमोदार्णव
ईदृग्ग्रन्थ-ललाम-निर्मित-कृते वर्धपनं ब्रूमहे ।।

- स्वामी अमृतवाग्भवाचार्यः

रास-नायक-नायिकम्

कविश्रीपुण्डरीकस्य रचना वचनाभिगा ।
समुल्लसित-सौरभ्या सभ्यानानन्दयिष्यति ।।

प्रो० बटुकनाथ शास्त्री खिस्ते

श्री रेवेश्वर-रञ्जना

राजस्थाने भरपुरि यः श्रील-सम्पूर्णदत्तो
मानोत्तुङ्गः कवि-कुल-मणिः पुण्डरीकोज्जवलश्रीः ।
रेवानाथ-स्तुति-सुरभिते काव्य-बन्धे तदीये ।
वाचं प्रास्ताविक-पद-मयीं स्वैरमुन्मीलयामि ।।

-राष्ट्रपति-सम्मानित महामहोपाध्याय
शास्त्रचूडामणि प्रो० बटुकनाथ शास्त्री खिस्ते
अध्यक्ष : काशी पण्डितसभा, वाराणसी